चन्दामामा
सितम्बर १९८१

जीवन और हनु तथा

नोबल पुरस्कार

नोबल संस्था की स्थापना स्वीडनके प्रसिद्ध केमिस्ट **अल्फ्रेड बर्नहर्ड नोबल** ने की थी जो कि डायनेमाइट के आविष्कार हैं। प्रत्येक वर्ष विभिन्न क्षेत्रों—भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, चिकित्सा शास्त्र व शरीर विज्ञान, साहित्य, शान्ति तथा अर्थ शास्त्र में महान उपलब्धि अर्जित करने वालों को नोबल पुरस्कार दिया जाता है। इसका मुख्यालय स्टाकहाम में है। 1978 में पुरस्कार की राशि ने पिछले सारे रेकार्ड तोड़ दिये जब कि हर वर्ग में 1,61,000 डालर का पुरस्कार दिया गया था।

मेरी क्यूरी (1867-1934) एकमात्र ऐसी महिला हैं जिन्हें दो बार नोबल पुरस्कार मिला है। 1903 में उन्हे भौतिक शास्त्र में रेडिओधर्मी तत्व पृथक करने और 1911 में रसायन शास्त्र में रेडियम और पोलोनियम की खोज के लिए पुरस्कार दिया गया था।

भारत में भी कई प्रसिद्ध व्यक्तियों को नोबल पुरस्कार मिला है। **डा. सी. वी. रमण** को 1930 में भौतिक शास्त्र में प्रकाश तथा पदार्थों के मध्य ऊर्जा के विनिमय के अध्ययन के लिए, जिसे बाद में 'रमन प्रभाव' कहा गया, पुरस्कार दिया गया। **रवीन्द्रनाथ टैगोर** (1861-1941) को अपनी काव्य पुस्तक 'गीतांजली' के लिए 1913 में साहित्य पुरस्कार दिया गया। अन्य प्रसिद्ध भारतीय विजेता युगोस्लाविया में जन्मी **मदर टरेसा** हैं जिन्हें 1978 में शान्ति पुरस्कार दिया गया।
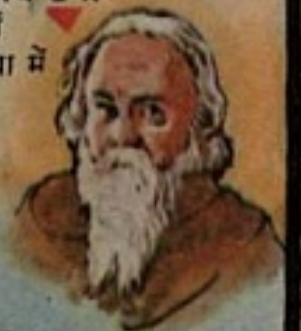
अन्तरराष्ट्रीय रेड क्रास ऐसी संस्था है जिसने 3 बार (1917, 1944 व 1963) नोबल पुरस्कार जीता है। युद्धकाल में इसका पहला काम घायल व्यक्तियों की देखभाल होता है। शान्तिकाल में इसके कामों में प्राथमिक उपचार, रक्त-बैंक, दुर्घटनाओं की रोकथाम तथा अन्य लोकोपकारी सेवाएं शामिल हैं।

जीवन बीमा आपके भविष्य को सुरक्षित रखने का सबसे बुद्धिमत्तापूर्ण रास्ता है। इसके बारे में और जानकार हो जाइये।

भारतीय जीवन बीमा निगम

अगली बार : जीवन और हनु देखते हैं कुछ अत्यन्त मनोरंजक खेल

daCunha-LIC-114 HN
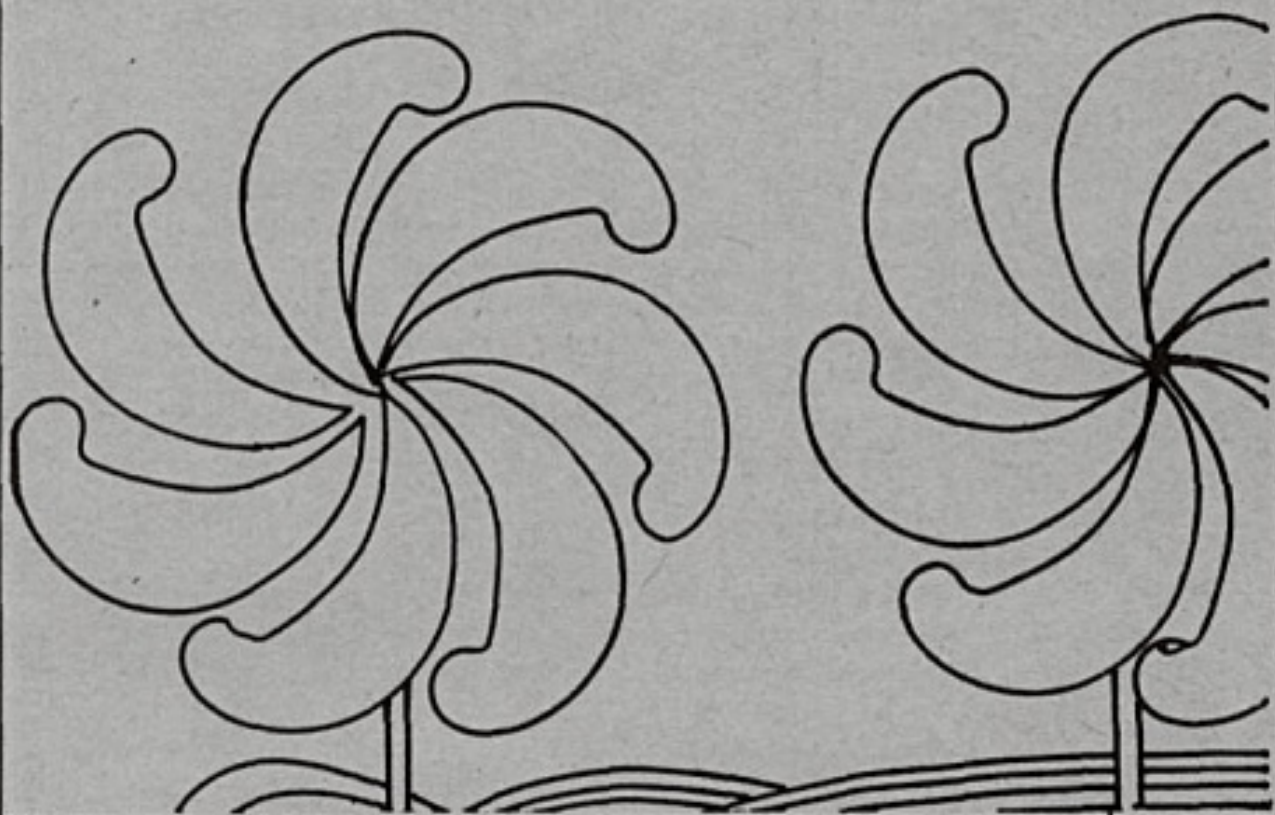
तितली रानी, तितली रानी, आओ हमारे संग
बाग़ हमारा देखो, देखो फूलों के रंग
पंखों पर तुम्हारे हम जैम्स सजाएँगे
आज तुमको जैम्स की तितली बनाएँगे
GEMS
कितनी मधुर कल्पना,
झट ले आओ जॅम्स अपना!
कॅडबरिज़
चॉकलेट्स
कॅडबरिज़ जॅम्स हैं ही ऐसे, मीठी मीठी कल्पनाओं जैसे!
OBM/6642/HN

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

"मकान की तंगी" नामक कहानी के द्वारा हमें इस सत्य का बोध होता है कि गहरे दोस्त भी अगर एक दूसरे के सुख-दुखों में हाथ बंटाने का स्वभाव नहीं रखते तो वे केवल मकानों को ही नहीं, बल्कि वे चाहेंगे तो दुनिया को भी तंग करने में सफल हो जाते हैं।

अमर वाणी

यदि संति गुणाः पुंसां विकसंत्येव ते पुनः।
न हि कस्तूरिकामोदः शपथेन विभाव्यते ।।

[कस्तूरी को हम भले ही छिपा दे, पर उसका परिमल नहीं छिपता, इसी प्रकार मनुष्य के अंदर के उत्तम गुण अपने आप प्रकट हो जाते हैं ।]

वर्ष : ३४ सितम्बर १९८१ अंक : १

एक प्रति : १-७५ : : वार्षिक चन्दा : २१-००

डरपोक

अपनी आदत के मुताबिक़ जानकीनाथ की पत्नी ने सारा घर झाड़ू देकर कूड़ा-करकट को दीवार पर से पड़ोसी घर के अहाते में डाल दिया और पीछे मुड़ते ही घबरा गई। अपने पति के पास लौट कर बोली–"रोज की आदत के मुताबिक़ मैंने सारा कूड़ा-करकट पड़ोसी घर के अहाते में डाल दिया है। शायद वे लोग झगड़ा करने पर तुल जाय, तुम जाकर उन्हें समझा-बुझा दो।"

अपनी पत्नी के मुंह से ये बातें सुन जानकीनाथ भी घबरा गया, क्योंकि किसी के साथ झगड़ा करने से वह डरता था।

बात यह थी कि आज तक पड़ोसी घर खाली था। जानकीनाथ की पत्नी कूड़ा-करकट गली में न डालकर पड़ोसी घर के खाली अहाते में डाल देती थी। उस मकान का मालिक शहर में व्यापारी था। उसने दो दिन पहले अपना मकान किसी को बेच डाला था। पिछले दिन कोई बकरियों की बड़ी रेवड़ के साथ उस मकान में प्रवेश कर चुका था।

जानकीनाथ ने अपनी पत्नी को डांटा, और बगल के मकान में झांककर देखा। पिछवाड़े में चालीस साल का एक आदमी बकरियों को बबूल के फल चरा रहा था।

"सुनो भाई, गली हमारे मकान से दूर है। आज तक हम लोग कूड़ा-करकट इस खाली जगह में डालते रहें, आज भी मेरी पत्नी ने ऐसा ही किया है।" जानकीनाथ ने समझाया।

जानकीनाथ के मुंह से ये बातें सुन पड़ोसी मकान का नया मालिक दीवार के पास आया और बोला–"आप को संकोच करने की जरूरत नहीं है। आप लोग अपना सारा कूड़ा-करकट हमारे अहाते में

रवीन्द्र केडिया

ही डाल दीजियेगा। मेरी पत्नी रोज सारा अहाता साफ़ करती ही है, आप का कूड़ा-करकट भी उठाकर फेंक देगी।"

ये बातें सुनने पर जानकीनाथ को लगा कि यह आदमी तो भोला शंकर है। बातचीत से उसे मालूम हुआ कि उस नये आदमी का नाम शेषावतार है और बकरियाँ ही उसकी संपत्ति है।"

जानकीनाथ अपने घर के भीतर आकर पत्नी से बोला–"यह नया आदमी निरे देहाती मालूम होता है। सारा कूड़ा-करकट उनके अहाते में डाल दो।"

एक दिन जानकीनाथ ने शेषावतार को डांट बताई–"सुनो भाई, तुम्हारी बकरियों के चिल्लाने पर रातों में हमारी नींद हराम होती जा रही है! क्या गाँव के मुखिये से शिकायत करूँ?"

शेषावतार गिड़गिड़ाने लगा–"महाशय, मेरी सारी जायदाद ये ही बकरियाँ हैं! मेरे पेट पर छुरी मत फेरो।"

जानकीनाथ बोला–"सुना है कि बकरी का दूध पीने पर रात में गहरी नींद आ जाती है। तुम हर रात को सेर भर दूध भेजा करो, तब रात के वक़्त तुम्हारी बकरियों की चिल्लाहटें हमें सुनाई न देंगी!"

"ज़रूर भेजूंगा। खुशी से भेजूंगा। दिन में सेर भर दूध और रात को सेर भर दूध!" शेषावतार ने हामी भर दी। उस दिन से जानकीनाथ शेषावतार के भोलेपन का आसरा लेकर उससे हर तरह की चाकरी करवाने लगा। जानकीनाथ के कुएँ से पानी भरना, पौधों के लिए थाल बनाना, उसकी दूकान के लिए शहर से लाये गये माल को गाड़ी से उतारना–ये सारे काम चुपचाप शेषावतार कर देता।

जानकीनाथ अपनी फुटकल चीज़ों की दूकान के वास्ते महीने भर का माल एक साथ मंगवा लेता था। इस वास्ते वह मुँह अंधेरे ही शहर में चला जाता। एक दिन चलते वक़्त उसने अपनी पत्नी को बुलाकर किवाड़ बंद करने को कहा।

वे रुपये मेरे हाथ दे दो। बकरियों के बेचने से मिलने वाले रुपयों से मुझे गहने बनवाने हैं!" यों कहते रुपये लेकर उसने अपने आँचल में गांठ बांध ली।

"तुम और कितनी बकरियों को बेच डालना चाहती हो?" जानकीनाथ ने पूछा।

"कितनी क्या? शेषावतार की रेवड़ के खतम होने तक। उसके मन में शक न हो, इस वास्ते मैंने पहले से ही एक उपाय सोच रखा है!" इन शब्दों के साथ उसने जानकीनाथ के कान में कोई बात डाल दी। इतने में पौधों में पानी देने के लिए शेषावतार उनके घर आया और बोला–"साहब, हमारी रेवड़ में से एक मेमना गायब हो गई है!"

इस पर जानकीनाथ की पत्नी बोली–"मैं कई दिनों से सोच रही थी कि ऐसी बात कभी हो जाएगी। इसमें कोई शक नहीं, यह काम तो पिशाचिनी का है!"

"ओह, पिशाचिनी तो मेरे ससुराल वालों की रिश्तेदारिन है! क्या वह ऐसा काम कर सकती है?" शेषावतार ने अचरज में आकर पूछा।

बात यह है कि शेषावतार की पत्नी की फूफी एकदम झगड़ालू है। लोग उसको पिशाचिनी ही पुकारते हैं, इसलिए शेषावतार उसका नाम पिशाचिनी ही समझ रहा था।

न मालूम बकरियों की रेवड़ में से एक मेमना कैसे छूटकर बाहर निकल आई, वह दर्वाजे के पास चिल्लाते घूम रही थी।

उसे देखते ही जानकीनाथ की पत्नी के दिमाग में एक विचार कौंध आया। वह अपने पति से बोली–"बेचारी यह मेमना देहाती ज़िंदगी से तंग आ गई है! इसे उठा ले जाकर शहर में बेच आओ। पच्चीस रुपये हाथ लग जायेंगे! इस अंधेरे में देखने वाला कौन है?"

अपनी पत्नी की बात सुनकर जानकीनाथ मेमने को कंधे पर डाल चला गया। शाम को वह पच्चीस रुपया लेकर घर लौटा।

जानकीनाथ सहानूभूति दिखाने का अभिनय करते बोला–"दर असल रिश्तेदार ही चुपके से दगा देते हैं?"

शेषावतार के चले जाने के बाद पति-पत्नी अपनी चाल के चलते खुश होकर आपस में कहने लगे–"हमारा उपाय खूब चल निकला। शेषावतार की रिश्तेदारिन की कृपा से हमें बहुत सारे गहने बनवाने का मौक़ा मिल जाएगा।"

"तब तो इस बार शहर में जाते वक़्त बड़ी बकरी को उठा ले जाओ। सौ रुपये मिल जायेंगे।"जानकीनाथ की पत्नी बोली।

इधर कुछ दिनों से वहाँ पर जो गड़बड़ चल रही थी, उसके साथ जानकीनाथ और उसकी पत्नी के वार्तालाप को भी बगल में रहने वाले पीपल के पेड़ पर बैठी एक छोटी पिशाचिनी ने सुन लिया। उसका निवास तो श्मशान का एक इमली का पेड़ था। उसके समीप में एक बरगद का पेड़ था, उस पर एक बड़ी पिशाचिनी रहा करती थी,जो छोटी पिशाचिनी को डरा-धमकाकर उससे कसकर काम लेती थी।

छोटी पिशाचिनी उस बेगारी से तंग आकर रोनी सूरत बनाने लगी, तब बड़ी पिशाचिनी बोली–"जानकीनाथ शेषावतार से जितना काम लेता है, उसमें से एक हज़ारवाँ हिस्सा भी मैं तुमसे नहीं कराती। तुम उस शेषावतार से सबक़ सीख लो।" ये बातें सुनने पर छोटी पिचाचिनी को बड़ी पिशाचिनी से पिंड छुड़ाने का एक उपाय सूझा।

एक दिन जानकीनाथ मुँह अंधेरे शेषावतार के अहाते में घुस पड़ा, सबसे ज्यादा मोटी-ताजा बकरी को हांककर शहर की ओर चल पड़ा। रास्ते में एक छोटा-सा जंगल पड़ता था। अंधेरा होने की वजह से जानकीनाथ का कलेजा धक्-धक् करने लगा। अपनी हिम्मत बटोरने के वास्ते वह बेमतलब के गीत गाते धीरे-धीरे चलने लगा। तब उसे ऐसे लगा कि बकरी के सर पर अचानक सींग उग आये

हो। थोड़ी दूर और आगे जाने पर बकरी के चेहरे पर दाढ़ी व बदन पर बाघ की धारियाँ दीख पड़ीं।

जानकीनाथ कांप उठा और अपने गाँव की ओर दौड़ने लगा। बकरी शेर की तरह भीकर गर्जन करते गाँव की सीमा तक उसका पीछा करती रही, तब वह चमगादड़ के रूप में बदलकर श्मशान वाले इमली के पेड़ पर जा बैठी।

जानकीनाथ ने घर लौटकर सारी बातें अपनी पत्नी को सुनाईं और बोला–"अगर मैं प्राणों के साथ घर लौट आया हूँ तो वह सिर्फ़ तुम्हारे पातिव्रत्य का प्रभाव है। हमने शेषावतार को निरा बेवकूफ़ समझा। हम उससे माफ़ी मांग लेंगे। सचमुच पिशाचिनी तो उसकी रिश्तेदारिन है।"

ये बातें सुन जानकीनाथ की पत्नी डर के मारे कांप उठी, तुरंत दीवार के पास जाकर शेषावतार को पुकारा। उससे बोली–"भाई साहब, हमको माफ़ कर दो। तुम पिशाचिनी को हम पर मत उकसाओ। आइंदा तुमसे बेगारी न लेंगे।" इन शब्दों के साथ पति-पत्नी ने उस से माफ़ी मांगी और उसी वक़्त तब तक बकरी के दूध का जो दाम लगा था, उसके साथ मेमने का दाम भी पूरा-पूरा चुकाया।

ये सारी बातें शेषावतार की समझ में बिलकुल न आईं, उसने सिर्फ़ अपने मन में यही सोचा कि हमारे ससुराल की रिश्ते-दारिन के नाम से ही ये लोग डरते हैं। इसके बाद जानकीनाथ को डरानेवाली छोटी पिशाचिनी ने पीपल के पेड़ पर जाकर बड़ी पिशाचिनी को सारा वृत्तांत सुनाया और बोली–"अब जानकीनाथ और उसकी पत्नी शेषावतार से बेगारी न लेंगे। तुम भी उनसे सबक़ सीख लो।"

बड़ी पिशाचिनी खिलखिला कर हँस पड़ी और बोली–"डरपोक लोगों की ज़िंदगी ऐसी ही होती है। तुमने जानकी नाथ को सबक़ सिखाया, मगर मुझे सबक़ सिखलाने वाले के पैदा होने तक तुमको मेरी बेगारी करनी ही पड़ेगी।"

[१६]

[व्याघ्रदत्त की आँख बचाकर समरसेन शिथिल नगर में पहुँचा। व्याघ्रदत्त भी अपने सैनिकों के साथ वहाँ पर आ धमका। उसने समझ लिया कि शाक्तेय का अपूर्व शक्तियों वाला त्रिशूल हाथीवन में गुरुद्रोही के कंकाल में है। व्याघ्रदत्त के मन में सहसा यह शंका पैदा हुई कि उस प्रदेश में कोई मानव है। बाद–]

व्याघ्रदत्त ने समरसेन तथा उसके सैनिकों के छिपे हुए प्रदेश की ओर नज़र डालकर अपने अनुचरों से कहा–"सुनो, यहाँ पर शिथिल भवनों की ओट में कोई छिपे हुए हैं। हो सकता है कि वे लोग हमारे प्रबल शत्रु शिवदत्त तथा उसके अनुचर हों। चाहे वे लोग कोई भी क्यों न हों, उन्हें पकड़ कर बन्दी बनाना है।"

ये बातें समरसेन के कानों में पड़ीं। उसने होनेवाले खतरे को भांप लिया। उसे लगा कि अपने साथ के छे सैनिकों को लेकर व्याघ्रदत्त का सामना करना खतरे से खाली नहीं है। उस हालत में जहाँ तक हो सके जल्दी उस प्रदेश को छोड़कर जाना वाजिब होगा।

इतने में व्याघ्रदत्त के अनुचर भयंकर रूप से चिल्लाते एक साथ समरसेन के

टूटे खंभों की आड़ में तथा दीवारों के पीछे भी छिपे रहकर समरसेन और उसके सैनिक व्याघ्रदत्त के सिपाहियों का सामना करने लगे। समरसेन को लगा कि व्याघ्रदत्त के अधिकांश सैनिकों को मार डाले बिना वहाँ से भाग जाना असंभव है।

व्याघ्रदत्त ने अपने सैनिकों को हिम्मत बंधाते हुए उसने खुद समरसेन का सामना करना चाहा। तब तक व्याघ्रदत्त के चार-पांच सैनिक समरसेन की तलवार की बलि हो चुके थें। उस प्रदेश में चारों तरफ़ घायल सैनिकों की कराहटें और चिल्लाहटों की गूंज सुनाई दे रही थी। उस हालत में व्याघ्रदत्त ने हिम्मत के साथ आगे कूद कर समरसेन का सामना किया।

दोनों अत्यंत पराक्रमी और कुशल योद्धा थे। देखते-देखते उनके बीच भयंकर रूप से खड्ग युद्ध शुरू हुआ। उनकी तलवारों के वार कभी चूक कर खंभों से लग जाते तो उनकी मार से शिथिल हो झुके हुए खंभे नीचे गिरने लगे। उसके मलबे से बचते हुए वे भीकर लड़ाई करने लगे।

यह लड़ाई देर तक जारी थी। आखिर व्याघ्रदत्त थक गया। इसे भांप

छिपे हुए शिथिल भवन की ओर कूद पड़े। समरसेन इस अचानक हमले पर चौंक पड़ा और अपने सैनिकों को चेतावनी देकर पीछे की ओर मुड़ा।

छे सैनिक तथा समरसेन एक तरफ़ और बीस सैनिक तथा उनका सरदार दूसरी ओर! वह सारा प्रदेश उनकी चिल्लाहटों और नारों से गूंज उठा।

शिथिल भवन के कक्षों तथा उनकी दीवारों की ओट में छिपते हुए समरसेन तथा उसके सैनिक वहाँ से खिसकने की सोचने लगे। मगर व्याघ्रदत्त अपने सैनिकों को दो दलों में बांटकर उन्हें घेरने को उकसाने लगा।

कर उसका अंत करने के लिए समरसेन तीव्र रूप से लड़ने लगा।

इस बीच संख्या में दुगुने बने व्याघ्रदत्त के अनुचर समरसेन के सैनिकों को बन्दी बनाने में सफल हुए। उन सैनिकों में दो-तीन खूब घायल हो चुके थे। उन सैनिकों को बन्दी बनाकर व्याघ्रदत्त के अनुचर अपने सरदार की मदद करने के लिए वहाँ से निकल पड़े। थोड़ी देर तक कोलाहल के बंद होने तथा अपने सैनिकों की चिल्लाहटों के न सुनाई देने के कारण समरसेन ने अनुमान लगाया कि उसके सारे सैनिक या तो बंदी बनाये गये हैं या मार डाले गये हैं। अब उसे जहाँ तक हो सके जल्दी व्याघ्रदत्त का अंत करके भाग जाना होगा। यों विचार कर समरसेन दुगुने उत्साह के साथ व्याघ्रदत्त पर हमला कर बैठा। पीछे से उस पर व्याघ्रदत्त के सैनिक अचानक टूट न पड़े, इस ख्याल से समरसेन एक दीवार से सटकर युद्ध करने लगा। मगर बेचारा वह नहीं जानता था कि वह जिस दीवार से सट कर लड़ाई कर रहा है, वह उजड़ने की हालत में है और किसी भी क्षण टूट कर गिर सकती है। लेकिन सामने से लड़ने वाले व्याघ्रदत्त ने इस बात को अच्छी तरह से भांप लिया।

अचानक व्याघ्रदत्त के अनुचरों के कठोर स्वरों की ध्वनि एक साथ गूंज

व्याघ्रदत्त को यह एक अच्छा मौक़ा मिला। वह जोर से जयकार करते समरसेन पर टूट पड़ा। इतने में व्याघ्रदत्त के सारे सिपाही भी वहाँ पर आ पहुँचे। उन लोगों ने समरसेन के हाथ-पैर कस कर पकड़ लिया। इस तरह समरसेन दुश्मन के हाथ बंदी बना।

इसके बाद व्याघ्रदत्त का आदेश पाकर उसके सैनिकों ने समरसेन को बन्दी बनाया। उसकी तलवार को व्याघ्रदत्त ने अपने हाथ में ले लिया।

अपने दुश्मन को बन्दी बनाकर व्याघ्रदत्त फूला न समाया। वह क्रूर हंसी के साथ बोला–"समरसेन, आखिर तुम मेरे साथ समझौता कर लेते तो तुम्हारी यह दुर्गति न होती। मुझे पता चल गया है कि शाक्तेय का अपूर्व शक्ति वाला त्रिशूल कहाँ पर है। अब तुम्हारी बुरी मौत निश्चित है!"

उठी। वे लोग समरसेन के सैनिकों को बन्दी बनाकर अपने नेता की मदद करने के लिए एक साथ दुश्मन पर झपटने को तैयार हैं। इस खतरे को भांपकर समरसेन व्याघ्रदत्त पर अपनी तलवार का वार करने के लिए तेजी के साथ उछल पड़ा और दीवार पर कूदने को छलांग मार बैठा।

समरसेन तेजी से ज्योंही छलांग मार कर दीवार पर खड़ा हो गया, त्यों ही पहले से ही गिरने को तैयार वह दीवार एक साथ पीछे की ओर टूट कर गिर पड़ी। तब समरसेन पत्थरों के बीच फँस गया।

व्याघ्रदत्त की बातें सुनकर समरसेन जरा भी विचलित न हुआ। अगर उसे बुरी मौत का सामना करना पड़े तो वह उसके लिए भी तैयार हो गया था। पर उसे अपने से बढ़कर अपने ऊपर विश्वास करने वाले सैनिकों की अधिक चिंता थी। वह सोचने लगा कि सेनापति होकर भी क्या मैं अपने अनुचरों का सही नेतृत्व न

कर पाया। उसे अपनी इस कमजोरी पर खुद ग्लानि होने लगी।

समरसेन को मौन देख व्याघ्रदत्त उसका अर्थ अन्य प्रकार से लगाने लगा। अत्यंत निर्भीक और निश्चल समरसेन का व्यवहार व्याघ्रदत्त के दिल को व्याकुल बनाने लगा। उसने अनुमान किया कि किसी ज़बर्दस्त व्यक्ति की मदद के भरोसे समरसेन शायद निश्चित होगा और वह अपने को बचाने की कोई योजना बना रहा है।

यों विचार कर व्याघ्रदत्त ने तीव्र स्वर में कहा—"याद रखो, इस बुरी हालत में तुम्हारी मदद कर सकने वाला कोई नहीं है।"

व्याघ्रदत्त ने सोचा कि यह धमकी सुनकर समरसेन अपने मददगारों के नाम प्रकट करेगा। पर व्याघ्रदत्त के भय और संदेह को प्रखर बुद्धि वाले समरसेन ने भांप लिया। उसने सोचा कि इस मौक़े का फ़ायदा उठा कर व्याघ्रदत्त को घबड़ा देने पर शायद उसका भला होगा।

यों विचार कर समरसेन ने कहा—"व्याघ्रदत्त, यह बात याद रखो कि शाक्तेय के त्रिशूल की जानकारी रखने वाले सिर्फ़ तुम अकेले ही न हो, और लोग भी हैं। अलावा इसके केवल इस त्रिशूल का पता लगने पर तुम्हारा प्रयोजन सिद्ध होने वाला नहीं है।"

यह उत्तर पाकर व्याघ्रदत्त चकित रह गया। शिवदत्त जानता है कि शाक्तेय का त्रिशूल शिथिल नगर के हाथी वन में है। साथ ही जब यह समाचार व्याघ्रदत्त अपने अनुचरों को सुना रहा था, तब समरसेन ने भी आड़ में रहकर सुन लिया था।

"मैं जानता हूँ कि तुमने ओट में रह कर यह बात सुन ली है कि त्रिशूल कहाँ पर है। शिवदत्त को भी इसका पता है। फिर भी तुम या शिवदत्त मुझे
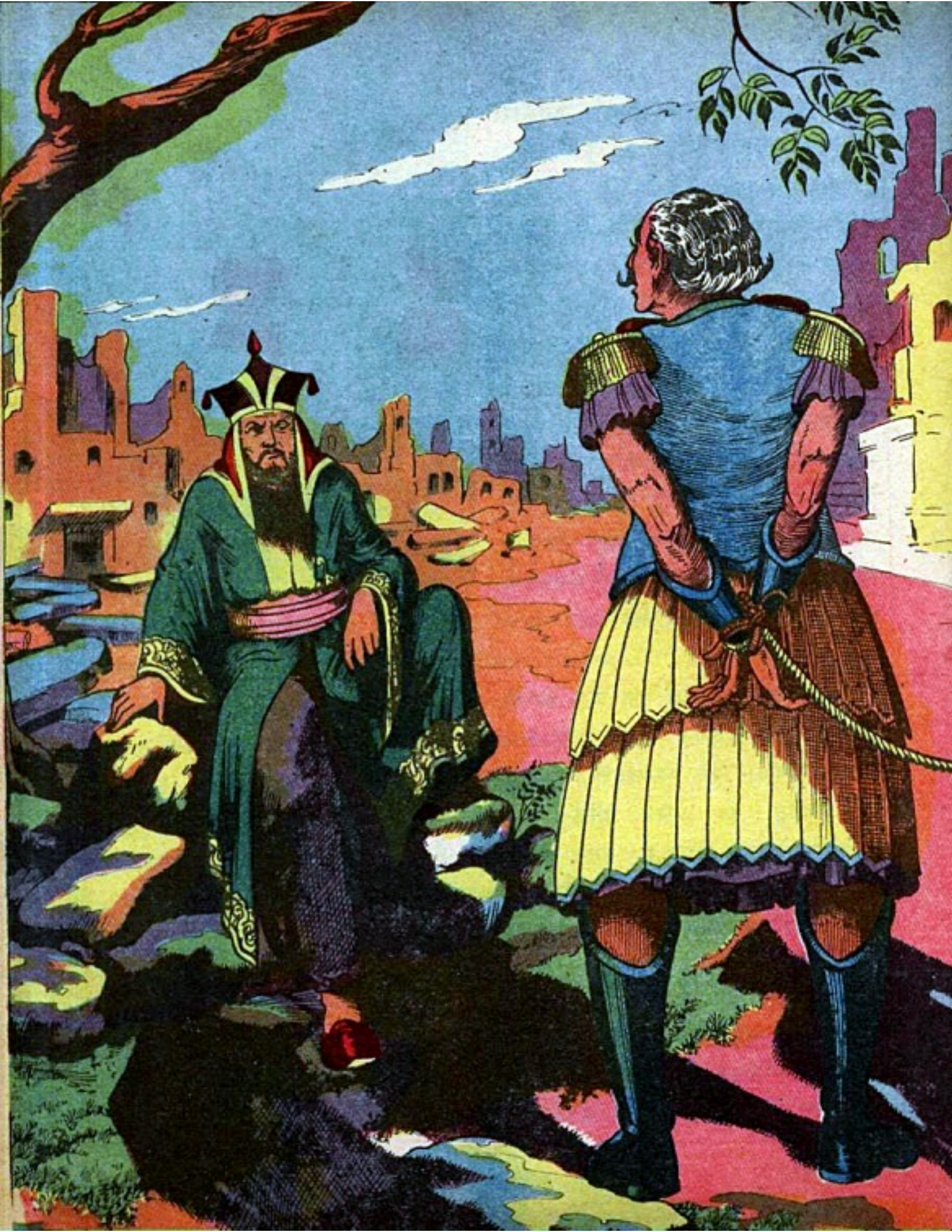
उस त्रिशूल को लेने से रोक नहीं सकते। ऐसी हालत में दिव्य शक्तियों वाले उस त्रिशूल को मेरे हाथ में पड़ने से रोकनेवाला ही कौन है?" व्याघ्रदत्त ने धमकी दी।

समरसेन ने इस सवाल का कोई जवाब न दिया, वह सिर्फ़ मुस्कुरा कर रह गया। समरसेन का विचार था कि इस प्रकार व्याघ्रदत्त के मन की शंका को और बढ़ाया जाय। इसकी सचाई की सूचना देते हुए व्याघ्रदत्त का चेहरा अचानक पीला पड़ गया।

इस पर समरसेन ने कहा—"व्याघ्रदत्त, त्रिशूल को तुम्हारे हाथों में पड़ने से रोकने वाले दो व्यक्ति हैं। उनमें से एक को तुम फिलहाल बन्दी बना सके। मगर उस त्रिशूल पर तुम्हारी नजर पड़ने के पहले ही तुम्हारा अंत करने वाला एक और व्यक्ति है! वह मेरे मित्र हैं। उसकी आज्ञा का पालन करने के वास्ते ही मैं तुम्हारे व्याघ्रमण्डल में प्रवेश कर चुका हूँ। समझें!"

ये बातें सुन व्याघ्रदत्त एकदम घबरा गया। अब उसके मन में यह शंका हुई कि उसकी विजय सरल नहीं है, जैसे वह अब तक सोच रहा था।

"मुझे रोकने वाले का नाम क्या है?" व्याघ्रदत्त ने पूछा।

"चतुर्नेत्र है!" समरसेन ने उत्तर दिया।

चतुर्नेत्र का नाम व्याघ्रदत्त के मन में ही नहीं उसके अनुचरों के मन में भी खलबली मचाने लगा। वे सैनिक भय-कंपित हो अपने नेता की ओर विस्मय के साथ देखने लगे। इसे भांपकर व्याघ्रदत्त झूठा उत्साह प्रदर्शित करते हुए बोला—"ओह, समझ गया! तुम उसको भी जानते हो?"

"मैं उसी के आदेश पर यहाँ तक आया हूँ। याद रखो, मैंने यह बात थोड़ी देर पहले ही बताई है।" समरसेन ने कहा।

Hindi Sep. F—2 A P. 11

यह जवाब सुनकर व्याघ्रदत्त आपाद-मस्तक कांप उठा। व्याघ्रदत्त ने पहले ही चतुर्नेत्र और उसकी अद्भुत शक्तियों के बारे में सुन रखा था।

व्याघ्रदत्त सोच ही रहा था कि अब क्या किया जाय, तभी उसे दूर पर सैनिकों का भयंकर कोलाहल सुनाई दिया। इस बीच एक सिपाही दौड़े-दौड़े वहाँ पर आ पहुँचा और कांपने वाले स्वर में बोला—"महानुभाव, शिवदत्त अपने अनुचरों के साथ शिथिल नगर में प्रवेश कर चुके हैं।"

यह खबर सुनते ही व्याघ्रदत्त को लगा कि उसके सर पर गाज गिर गई हो! अब उसके सामने दो ही मार्ग थे, एक अपने मुट्ठी भर अनुचरों की मदद से शिवदत्त का सामना किया जाय, दूसरा—वहाँ से जान बचाकर भाग जाय। लेकिन समरसेन को क्या किया जाय, यह सवाल भी उसके सामने था। उसे लगा कि उसी क्षण ममरसेन का अंत कर देना उचित होगा। पर उसे इस बात का भय भी लगा कि यह काम भी खतरे से खाली नहीं है। अपने मित्र की मौत पर क्रोध में आकर सारे व्याघ्र मण्डल को चतुर्नेत्र मटियामेट कर सकता है।

ये सारी बातें सोचकर व्याघ्रदत्त बोला—"समरसेन, इन सारी घटनाओं के बावजूद भी मुझे ऐसा लगता है कि हम दोनों का समझौता कर लेना दोनों के लिए कल्याणकारी होगा। समझौते की शर्तों के बारे में हम दोनों फ़ुरसत के साथ बैठ कर चर्चा कर लेंगे। फिलहाल हम दोनों यहाँ से तुरंत एक सुरक्षित प्रदेश में चले जायेंगे।"

इसके बाद बेहथियार समरसेन को साथ लेकर व्याघ्रदत्त और उसके अनुचर तेजी के साथ वहाँ से भागने लगे। दूर पर शिवदत्त के अनुचरों के साथ लड़ने वाले व्याघ्रदत्त के बचे हुए सिपाहियों के लड़ने की आवाज और चिल्लाहटें सुनाई दे रही थीं। (और है)

हृदयपरिवर्तन

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा, तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजन, मुझे इस बात का आश्चर्य होता है कि लोग हर पल अपने विचारों को क्यों बदलते हैं? इसके उदाहरण के रूप में मैं आपको विक्रमवर्मा तथा समरसेन की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल यों सुनाने लगा: विक्रमपुरी और आनंदपुरी राज्यों के बीच चिर काल से दुश्मनी थी। कई पीढ़ियों से जब भी दोनों के बीच की हालत खराब हो जाती तो, बराबर लड़ाइयाँ छिड़ती रहीं। उन लड़ाइयों के कारण धन और प्रजा की अपार क्षति होती थी। लेकिन कोई राज्य दूसरे राज्य को जीत नही पाता

बेताल कथाएँ

था। इस पीढ़ी में विक्रमपुरी के राजा विक्रमवर्मा बने और आनंदपुरी के राजा आनंदवर्मा बने। आनंदवर्मा का मंत्री भद्रपाल था और सेनापति समरसेन।

आनंदवर्मा ने गद्दी पर बैठते ही विक्रमपुरी को हराने का निश्चय किया। इसका समर्थन करते हुए मंत्री भद्रपाल ने कहा–"इन दोनों राज्यों के बीच जो लड़ाइयाँ हुईं, उनकी वजह से हमारी प्रजा का भारी नुक़सान हो गया है। दोनों राज्य बराबर ताक़तवर हैं, इस कारण एक दूसरे को हरा नहीं पाये; मुझे ऐसा मालूम होता है कि बिना वजह के दो राज्यों के बीच लड़ाइयाँ होती रही हैं, मेरा विचार है, कि विक्रमपुरी के साथ मैत्री संबंध स्थापित करना हर तरह से हमारे लिए फ़ायदेमंद होगा!।"

लेकिन राजा आनंदवर्मा ने समरसेन की सलाह का तिरस्कार करते हुए तुरंत लड़ाई की तैयारियाँ शुरू कीं। इस पर समरसेन सैनिकों को प्रशिक्षण देने और दुर्ग को और ज्यादा मज़बूत करने के काम में डूब गया। मंत्री भद्रपाल ने युद्ध के लिए आवश्यक धन इकट्ठा करने के वास्ते जनता से कर वसूल करना शुरू किया।

विक्रमपुरी के राजा विक्रमवर्मा न केवल एक महान वीर थे, बल्कि वे शासन कार्यों में दक्ष और प्रखर बुद्धि वाले भी थे। उन्होंने अपने गुप्तचरों के द्वारा आनंदवर्मा की युद्ध की तैयारियों का पता लगाकर अपनी सेनाओं को अच्छी तरह से तैयार रखा।

इस बीच विक्रमवर्मा इस निर्णय पर पहुँचे कि आनंदवर्मा के द्वारा अपने राज्य पर हमला बोल देने के पहले ही आनंदपुरी पर आक्रमण करना ज्यादा उचित होगा। फिर क्या था, वे बिना देरी किये अपनी सेनाओं के साथ आनंदपुरी पर चढ़ बैठे।

राजा आनंदवर्मा ने अपनी सेनाओं को आदेश दिया कि वे दुर्ग से बाहर जाकर विक्रमवर्मा की सेनाओं का सामना करें।

दोनों देशों की सेनाओं के बीच कुछ दिन तक भयंकर युद्ध हुआ। जब आनंदवर्मा को पता चला कि विक्रमवर्मा खुद अपनी सेनाओं का संचालन कर रहे हैं, इस पर वे भी अपनी सेनाओं का संचालन करने आगे आये। पर दूसरे ही दिन शत्रु पक्ष के एक विषैले बाण के द्वारा घायल होकर आनंदवर्मा मर गये।

समरसेन ने अपनी सेनाओं को किले के अन्दर ले जाकर दुर्ग के दर्वाजे बंद करवाये। पर आनंदवर्मा के कोई वारिस न थे, इसलिए उनके सामने यह समस्या पैदा हुई कि ऐसी हालत में क्या किया जाय? मंत्री भद्रपाल ने सुझाव दिया कि चूंकि उनके राजा आनंदवर्मा मर गये हैं, इसलिए उस युद्ध में अपनी हार मानकर विक्रमवर्मा के साथ समझौता कर ले।

मगर समरसेन ने इसका विरोध करते हुए कहा—"हमारा दुर्ग बहुत ही मजबूत है, हमारे पास कई महीनों के लिए आवश्यक रसद किले के भीतर है, इसलिए हम दुर्ग के अन्दर रहकर ही लड़ाई जारी रखेंगे। जब विक्रमवर्मा के मन में यह विचार पैदा होगा कि वे हमको पराजित नहीं कर सकते, तब हम उनके साथ समझौता करने का प्रयत्न करेंगे। इस हालत में तो समझौते की उनकी शर्तें ज़्यादा कठिन हो सकती हैं।"

दुर्ग पर अधिकार करने के लिए विक्रमवर्मा ने जो प्रयत्न किये, वे सफल नहीं हुए, इसलिए वे अपने प्रयत्न को त्याग कर अपने राज्य को वापस लौटना चाहते थे; इस बीच मंत्री भद्रपाल के द्वारा उन्हें विजय के मौक़े दिखाई दिये।

बात यह है कि भद्रपाल के मन में यह शक हुआ कि आनंदवर्मा की मौत के बाद सेनापति समरसेन आनंदपुरी के राजा बनने की सोच रहा है। यदि समरसेन राजा बना तो मंत्री के पद से भद्रपाल को हटा देगा। इसलिए भद्रपाल ने सोचा कि दुर्ग को विक्रमवर्मा के अधीन करके अपने मंत्री-पद को बनाये रखे। इसी

विचार से उसने विक्रमवर्मा के साथ गुप्त रूप से समझौते के प्रयत्न शुरू किये ।

भद्रपाल के षडयंत्र की वजह से एक दिन रात को अचानक आनंदपुरी का दुर्ग विक्रमवर्मा के अधीन हो गया । समरसेन के साथ कई मुख्य अधिकारी क़ैद किये गये । मगर भद्रपाल की कल्पना के अनुसार विक्रमवर्मा ने समरसेन को खुले आम फांसी पर नहीं चढ़ाया ।

एक दिन विक्रमवर्मा ने समरसेन को क़ैद से बुलवा कर पूछा-"मैंने तुम्हें फांसी के तख्ते पर चढ़ाने का निश्चय कर लिया है, मगर तुम मेरे प्रति राज-भक्ति प्रकट करोगे तो मैं न केवल तुम्हारे प्राणों की रक्षा करूंगा, बल्कि तुमको फिर से सेनापति के पद पर नियुक्त करूंगा । बताओ, तुम्हारा क्या विचार है ?"

समरसेन ने बताया कि वह अपनी मौत का स्वागत करने के लिए तैयार है, लेकिन वह विक्रमवर्मा के यहां सेनापति का पद स्वीकार करन के लिएं तैयार नहीं है ।

"अच्छी बात है, अगर तुम अंतिम समय में मेरे सामने कुछ निवेदन करना चाहते हो, तो कर सकते हो!" विक्रमवर्मा ने पूछा ।

समरसेन ने कहा-"महाराज, मुझे ऐसा मालूम होता है कि कई पीढ़ियों से विक्रमपुरी तथा आनंदपुरी के बीच जो लड़ाइयां चली आ रही हैं, उनका मुख्य कारण मुट्ठी भर लोगों कीं मूर्खता है । आप विजयी हैं, इसलिए में आप से यही निवेदन करना चाहता हूं कि आप कृपया आनंदपुरी की प्रजा को कष्ट दिये बिना उन पर न्यायपूर्वक शासन कीजिए !"

ये बातें सुनने के बाद विक्रमवर्मा ने समरसेन को फांसी पर चढ़ाने का अपना निर्णय बदल लिया और उसे क़ैद से मुक्त किया । पर उस पर निगरानी रखने के लिए अपने विश्वास पात्र गुप्तचरों को नियुक्त किया । मंत्री भद्रपाल ने सोचा था कि उसे विक्रमवर्मा मंत्री के पद

पर नियुक्त करेंगे, लेकिन कई दिन बीतने पर भी राजा का उसे कोई आदेश नहीं मिला। कारण यह था कि विक्रमवर्मा उसकी बात बिलकुल भूल गये थे। कालांतर में विक्रमवर्मा ने अपने सुशासन के द्वारा जनता के बीच अच्छा नाम कमाया। उन्होंने अपने विरुद्ध लड़ाई में भाग लेने वाले अधिकारियों को किसी प्रकार का दण्ड नहीं दिया। उस हालत में समरसेन ने एक दिन विक्रमवर्मा के दर्शन करके निवेदन किया कि राजदरबार में उसे किसी भी प्रकार की कोई नौकरी दे तो वह खुशी के साथ करने को तैयार है।

इस पर विक्रमवर्मा बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने समरसेन को अपने प्रमुख सलाहकार के रूप में नियुक्त करके यह घोषणा की कि राजा जब राजधानी में नहीं रहेंगे तब उनके प्रतिनिधि के रूप में समरसेन राज-काज संभाल लेंगे।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "राजन, विक्रमवर्मा तथा समरसेन के प्रति मेरे मन में कई संदेह पैदा हो रहे हैं। समरसेन ने प्रारंभ में युद्ध का विरोध किया और विक्रमवर्मा के साथ समझौता करने की सलाह दी, लेकिन जब युद्ध शुरू हुआ और उसमें आनंदवर्मा की मृत्यु हो गई तब उसने विक्रमवर्मा के साथ समझौता करने से इनकार किया। इसी प्रकार समरसेन ने पहले विक्रमवर्मा के यहाँ सेनापति का पद स्वीकार करने से इनकार किया और बाद को उनके दरबार में किसी भी तरह की नौकरी करने के लिए तैयार हो गया!

"अब विक्रमवर्मा की बात रही। उन्होंने प्रारंभ में समरसेन को फांसी पर चढ़ाने का निश्चय किया और बाद को अपना यह विचार बदल कर उसको सेनापति का पद देने को तैयार हो गये। समरसेन ने जब उस पद को अस्वीकार किया, तब विक्रमवर्मा उस पर नाराज़ नहीं हुए, बल्कि उसे क़ैद से भी मुक्त कर

दिया। इसी तरह भद्रपाल को मंत्री का पद देने का लोभ दिखाकर उसे उस पद पर नियुक्त नहीं किया। इसलिए विक्रमवर्मा तथा समरसेन के ये परस्पर विरुद्ध विचार मेरी समझ में नहीं आ रहे हैं। वे बराबर अपने विचारों को क्यों बदलते रहे? इन संदेहों का समाधान जानकर भी न देंगे तो आपका सर फट जाएगा।"

इसका उत्तर विक्रमार्क ने यों दिया— "विक्रमवर्मा तथा समरसेन का व्यवहार अनुचित नहीं है। चाहे युद्ध में हार-जीत किसी की भी क्यों न हो, जनता की हानि होगी, इस ख्याल से समरसेन ने प्रारंभ में युद्ध का विरोध किया। आनंदवर्मा की मृत्यु के बाद भी उन्होंने इसीलिए जनता की हानि का ख्याल करके ही समझौते का विरोध किया। उसके मन में इस बात का डर था कि विजय के घमण्ड में आकर कहीं विक्रमवर्मा जनता को सताने लग जाये! जब विक्रमवर्मा ने उसे फांसी की सजा सुनाई तब भी समरसेन ने अपनी अंतिम इच्छा के रूप में जनता पर न्यायपूर्वक शासन करने की प्रार्थना की। जब समरसेन ने देखा कि विक्रमवर्मा का शासन न्यायपूर्वक चल रहा है, तब उनके पास किसी भी प्रकार की नौकरी करने को तैयार हो गया।

वास्तव में विक्रमवर्मा सहज ही जनता का हित चाहनेवाले शासक हैं। फ़ांसी की सजा सुनाने के बाद भी समरसेन ने अपनी अंतिम इच्छा के रूप में जो बातें कहीं, उनसे विक्रमवर्मा ने जान लिया कि वह कपट स्वभाव का नहीं है, बल्कि एक विश्वासपात्र व्यक्ति है। यह बात अच्छी तरह से समझ लेने के बाद समरसेन ने जब उनके यहाँ नौकरी करने की इच्छा प्रकट की तब उसको अपने सलाहकार के रूप में नियुक्त कर लिया।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

राजा के दर्शन

कौशांबी नगर में विट्ठल नामक एक ब्राह्मण पंडित निवास करता था। सरस्वती की कृपा तो उसे प्राप्त थी, लेकिन लक्ष्मी का वरदान उसे प्राप्त न था। गरीबी की वजह से उसके पांडित्य को भी मान्यता नहीं मिली।

विट्ठल अपने परिवार को भूखा देख राजा के दर्शन करके अपने पांडित्य का प्रदर्शन कर राज दरबार में छोटी नौकरी पाने के विचार से घर से चल पड़ा।

उन दिनों में कौशांबी के राज कर्मचारियों में घूसखोरी खुले आम चलती थी। छोटा सा काम भी बनाना हो तो घूस दिये बिना बनता न था। प्रत्येक काम के लिए कितना घुस देना है, यह पहले ही निश्चित था।

विट्ठल बेचारा देहाती था। ये बातें वह बिलकुल जानता न था। वह सीधे राज दरबार के पहरेदारों के पास पहुँचा और राजा के दर्शन करने की अपनी इच्छा बताई।

पहरेदार ने हाथ बढ़ाकर पूछा–"मेरे हिस्से के सिक्के देकर तब आगे बढ़ियेगा! दरबार में पहुँचने के लिए कुल चार दर्वाजे हैं। उन्हें भी कुछ न कुछ देना होगा।"

विट्ठल ने अचरज में आकर पूछा–"क्या राजा के दर्शन के लिए घूस देना होगा? क्या सीधे जाकर हम राजा के दर्शन नहीं कर सकते?"

"आप ज्यादा बात मत कीजियेगा। सिक्के अपने साथ लाये हो तो, मुझे देकर अंदर चले जाइये; वरना अपना रास्ता नाप लीजिए!" पहरेदार खीझकर बोला।

विट्ठल की आँखों में आँसू आ गये। उसके पास पहरेदारों को देने के लिए एक

सुदर्शन नारंग

कौड़ी भी न थी। पहरेदारों को कुछ न कुछ देने पर ही राजा के दर्शन हो सकते हैं। इसलिए वह उदास हो वापस लौटने लगा। तब अचानक उसके दिमाग में कोई उपाय सूझ पड़ा।

वह एक चौरास्ते में खड़े होकर आने-जाने वाले लोगों के सामने राजा की निंदा करने लगा: "भाइयो, सुन लो! तुम लोग हमारे राजा को धर्मात्मा समझ रहे हो! लेकिन यह बात सही नहीं है, ये तो अत्याचारी हैं! ये राजा तो गद्दी पर बैंठने के क़ाबिल नहीं हैं। इनको राजा पुकारने के बदले में इमली व मिर्च तौलने वाला तराज़ू कहना ज्यादा उचित होगा।"

लोगों ने विट्ठल को पागल समझा। उस वक़्त सिपाही पहुँचे और विट्ठल को राजद्रोही मानकर उसे राजा के सामने खींच ले गये।

राजा ने अपनी आँखें लाल करके विट्ठल से पूछा-"अबे घमण्डी पंडित, जानते हो कि राजा की निंदा करने का दण्ड क्या होता है?" विट्ठल ने राजा के सामने सर झुकाकर कहा-"महाराज, जब तक आपकी निंदा नहीं की जाती है, तब तक आपके दर्शन नहीं मिलते हैं तो हम कर ही क्या सकते हैं? हमें लाचार होकर आपकी निंदा करनी ही पड़ती है न?"

"यह तुम क्या कहते हो?" राजा ने गरज कर पूछा।

"महाराज, आप मुझे क्षमा कीजियेगा! मैं एक गरीब पंडित हूँ। आपके दर्शन करने पहुँचा तो पहरेदार ने मुझ से घूस माँगा। इसलिए मैंने आपकी निंदा करने जैसे अभिनय किया। फिर क्या था, मुझे तुरंत आपके दर्शन मिल गये!" विट्ठल ने कहा।

इसके बाद राजा ने सुनवाई की तो यह बात प्रकट हो गई कि सभी राजकर्मचारी घूसखोर हैं। तब उन्हें दण्ड देकर राजा ने विट्ठल को अपने दरबार में कोई अच्छी नौकरी दी।

मकान की तंगी

विनायक राव ने शहर में जब अपना स्थिर निवास बनाया, तब उसने एक मकान बनवा लिया। उसमें सारी सुविधाएँ करवा लीं।

एक बार वेंकटेश शहर में आया। उसे वहाँ पर एक छोटी सी नौकरी मिल गई। उसने विनायक राव के घर जाकर पूछा– "दोस्त, शहर में मकान का किराया हद से ज्यादा है। मेरी तनख्वाह भी वैसे कोई ज्यादा नहीं है, इसलिए तुम मान जाओगे तो मैं और मेरी पत्नी राधा थोड़े दिन तक तुम्हारे घर में रहना चाहते हैं।"

विनायक राव ने अपनी पत्नी की राय माँगी, उसने बताया कि इतने सारे लोगों के लिए तो मकान तंग हो सकता है। पर विनायक राव ने अपनी पत्नी को समझाया–"हम उन्हें थोड़े दिन हमारे घर रहने देंगे, अगर हमें मकान तंग मालूम पड़े तो दूसरा मकान किराये पर लेने को कहेंगे।" इसी शर्त पर वेंकटेश ने विनायक राव के घर में प्रवेश किया।

विनायक राव और उसकी पत्नी व बच्चे बहुत ही मिलनसार थे, लेकिन वेंकटेश और उसकी पत्नी राधा इसके बिलकुल विपरीत स्वभाव के थे। वे दोनों एक कमरे में रहा करते थे, वे हमेशा आपस में बातचीत किया करते थे। दिन में एक बार वेंकटेश विनायक राव से दो-चार बातें कर लेता था।

राधा अपनी रसोई अलग बना लेती थी। उसके बर्तन वगैरह रखने के वास्ते विनायक राव की पत्नी को रसोई घर की एक अलमारी खाली करनी पड़ी। धीरे-धीरे विनायक राव का परिवार महसूस करने लगा कि उनका मकान तंग हो गया है।

"वसुंधरा"

खुश होते हुए शिष्टाचार के नाते बोला–"तुम अचानक कैसे जा सकते हो? सस्ते में मकान मिलने पर तब जाओ!"

"मैं कई दिनों से मकान की खोज में था, अब जाकर सस्ते में मकान मिल गया है। इस बीच मेरी तनख्वाह भी बढ़ा दी गई है। इसीलिए तुम्हारे मकान को छोड़ कर जा रहा हूँ।" वेंकटेश ने कहा।

उसी दिन वेंकटेश मकान खाली करके अपनी पत्नी के साथ चला गया। जाते वक़्त उन दोनों ने शिष्टाचार के नाते भी अपने घर आने का निमंत्रण न दिया।

विनायक राव यह सोचकर दुखी हुआ कि वेंकटेश ने मकान की खोज करते वक़्त उसकी मदद नहीं ली। विनायक राव की पत्नी यह सोचकर दुखी हुई कि वेंकटेश की पत्नी ने अपने घर उसे बुलाया तक नहीं; चाहे जो हो, अब उन्हें अपना मकान बहुत बड़ा मालूम होने लगा और संतोष की सांस लेने लगे।

इस बीच विनायक राव का एक और दोस्त सुधाकर उसी शहर में आया। उसकी पत्नी और चार बच्चे भी आ पहुँचें। शहर में आते ही विनायक राव के घर में अपना डेरा डाला। सुधाकर ने कहा–"मैं यहाँ पर तीन साल रहूँगा। हम बहुत दिन बाद मिल रहे हैं। इसलिए

विनायक राव को कभी अगर उसकी पत्नी से बात करनी होती तो वह इस डर से चुप रह जाता था कि कहीं उनकी बात-चीत वेंकटेश सुन न ले। कभी थोड़ी देर के लिए वेंकटेश अपनी पत्नी के साथ बाहर चला जाता तो घर के सभी लोग आराम से दिल खोलकर बात कर लेते।

कुछ महीने बीत गये। एक दिन अचानक वेंकटेश ने विनायक राव को बताया कि वह उसका मकान छोड़कर दूसरी जगह जा रहा है। वैसे विनायक राव बहुत दिनों से महसूस कर रहा था कि वेंकटेश घर छोड़कर चला जावे तो बड़ा अच्छा होगा, इसलिए मन ही मन

तुम मुझे मना भी करो, तब भी छे महीने तुम्हारे घर में रहूँगा ही ।"

विनायक राव ने कोई जवाब नहीं दिया, मगर उसकी पत्नी ने विनायक राव को अलग बुलाकर समझाया–"वेंकटेश और उसकी पत्नी कुल दो आदमियों के रहने पर ही हमारा मकान तंग मालूम होता था, अब ये महाशय अपने चार बच्चों के साथ आ धमके हैं! कहा जाता है कि बाद को मन मुटाव होने के बदले अभी साफ़ बतला देना अच्छा होगा ।"

विनायक राव की पत्नी ने सोचा कि अब थोड़े दिन के लिए इस परिवार का बोझ उठाना ही पड़ेगा, यों निश्चय करके उसने रसोई घर की एक अलमारी खाली कर दी और सुधाकर की पत्नी को बुला कर कहा–"भाभीजी, तुम इस अलमारी में अपने बर्तन-भांडे रख लो ।"

सुधाकर की पत्नी अचरज में आकर बोली–"हमारे लिए एक अलग अलमारी की क्या जरूरत है? हम लोग तो मिल कर ही रहने वाले हैं न?"

उसी समय सुधाकर वहाँ पर आ पहुँचा और विनायक राव को बुलाकर बोला–"सुनो दोस्त, तुम्हें संकोच करने की कोई जरूरत नहीं है! हमारे दोनों परिवार मिल-जुलकर ही रहने वाले हैं। हमारे परिवारों की रसोई एक साथ बनेगी, जो भी खर्च होगा, हम बराबर बाँट लेंगे!"

विनायक राव आश्चर्य चकित हुआ और उसने अनायास ही सर हिलाकर अपनी स्वीकृति दी। उस दिन से विनायक राव की पत्नी तथा सुधाकर की पत्नी एक दूसरे का हाथ बंटाते रसोई और घर के काम-काज मिल-जुल कर करने लगीं।

विनायक राव के बच्चे तथा सुधाकर के बच्चे स्नेहपूर्वक एक साथ खेलते रहे।

सुधाकर अपनी समस्याएं व तकलीफ़ें भी विनायक राव को सुनाकर उसकी सलाहें लिया करता था। विनायक राव भी सुधाकर का परामर्श करके समय पर

उसे उचित सलाहें दिया करता था। घर में अगर कोई उत्सव-त्योहार आ पड़ता तो सब लोग मिलकर मनाते। धीरे-धीरे विनायक राव का परिवार यह बात बिल्कुल भूल गया कि वह मकान उसका है और सुधाकर का पविार कोई पराया है।

छे महीने बीत गये। एक दिन सुधाकर ने विनायक राव से कहा—"दोस्त, बात की बात मे छे महीने बीत गये हैं। हम लोग अब कब तक तुम्हारे घर में रह सकते हैं? हमारे लिए कहीं एक छोटा-सा मकान किराये पर ढूंढ़ लो।"

"दोस्त, तुम जब तक इस शहर में नौकरी करते रहोगे, तब तक तुम हमारा मकान छोड़कर नहीं जा सकते! सच पूछा जाय तो तुम इस शहर को छोड़ मत जाओ! मैं तुमसे यही चाहता हूँ।"

"बहन, तुम सुन रही हो न? हमारी वजह से तुम्हारे लिए यह मकान तंग नहीं हो गया है!" विनायक राव की पत्नी की ओर देखते सुधाकर ने कहा।

"भाई साहब, हम तो ऐसा महसूस नहीं करते। लेकिन छे महीने पहले वेंकटेश अपनी औरत के साथ हमारे मकान में रहा करते थे। वे सिर्फ़ दो ही आदमी थे, फिर भी हमें ऐसा मालूम होता था कि हमारा मकान एकदम तंग हो गया है! लेकिन तुम लोग संख्या में कहीं ज़्यादा हो, फिर भी हमें यह मकान तंग मालूम नहीं होता, उल्टे ऐसा लगता है कि यह घर भरा-पूरा है! तुम लोगों के चले जाने पर यह मकान सूना-सूना मालूम हो जाएगा। इसलिए तुम लोग हमें छोड़ कहीं नहीं जा सकते।" विनायक राव की पत्नी ने कहा।

इसके बाद सुधाकर तब तक विनायक राव के घर में रहा, जब तक उसने अपना नया मकान नहीं बनाया। आखिर विनायक राव ने इस सत्य का अनुभव किया कि मकान का तंग हो जाना उसके छोटे या बड़े होने के साथ कोई संबंध नहीं है, बल्कि उसमें निवास करने वाले मनुष्य ही उसे तंग या भरा-पूरा या विशाल बना सकते हैं!

अपात्र दान

मगध राज्य जब उच्च दशा में था, तब बोधिसत्व एक राजा के यहां कोशाध्यक्ष थे। उनके पास अस्सी करोड़ मुद्राओं की अपनी निजी संपत्ति थी।

उन्हीं दिनों में काशी राज्य में श्रीवत्स नामक एक और धनवान रहा करते थे। उनके यहाँ भी अस्सी करोड़ मुद्राओं से ज्यादा संपत्ति थी। ये दो करोड़पति बोधिसत्व तथा श्रीवत्स दिली दोस्त थे।

दुर्भाग्यवश व्यापार में श्रीवत्स की सारी संपत्ति नष्ट हो गई और वह एक गरीब बन बैठे। उस हालत में उन्हें अपने मित्र बोधिसत्व की याद हो आई।

श्रीवत्स अपनी पत्नी को साथ लेकर पैदल चलकर मगध राज्य पहुँचे और बोधिसत्व से मिलने गये।

बोधिसत्व ने आगे बढ़कर श्रीवत्स से कुशल प्रश्न पूछे। इस पर वह रोते हुए बोले—"बोधिसत्व, मेरे बुरे दिन आ गये हैं। मैं एक भिखारी बन गया हूँ। इस हालत में तुम्हें छोड़कर मेरी मदद करने वाला कोई नहीं है। इसी विश्वास को लेकर मैं तुम्हारे पास आया हूँ।"

"मेरे प्यारे श्रीवत्स, तुम बिलकुल चिंता न करो। विपत्ति के समय दर असल तुम्हें जिस जगह पहुँचना था, ठीक उसी जगह पहुँच गये हो!" यों समझा कर बोधिसत्व ने अपनी सारी संपत्ति में से आधा—याने चालीस करोड़ मुद्राएं अपने मित्र को दे दीं और साथ ही अपने परिचारकों में से आधे लोगों को उसे सौंप दिया।

थोड़े दिन बीत गये। राज्य में आराजकता फैलने की वजह से बोधिसत्व अपने पद के साथ धन भी खो बैठे। वे भी दरिद्र बन गये। उस हालत में उनके मन

में यह विश्वास पैदा हो गया कि इस दुख व दारिद्र्य के वक़्त अपने मित्र श्रीवत्स के सिवाय कोई उनकी मदद करने वाला नहीं है। इसी विश्वास के बल पर बोधिसत्व अपनी पत्नी के साथ काशी राज्य के लिए चल पड़े।

काशी नगर की सीमा पर पहुंचते ही बोधिसत्व अपनी पत्नी को एक पेड़ की छाया में बिठा कर बोले–"तुम घबराओ मत, मैं अपने दिली दोस्त श्रीवत्स को सारा हाल सुनाकर तुम्हें लिवा लाने गाड़ी के साथ परिचारकों को भी भेज दूंगा।" यों कहकर वे शहर के अन्दर चले गये।

बोधिसत्व ने श्रीवत्स के महल में पहुँच कर पहरेदार को अपना परिचय दिया और यह समाचार उसके मालिक को बताने को कहा। पहरेदार भीतर चला गया। थोड़ी देर बाद लौट कर उन्हें सूचना दी कि उसके मालिक बोधिसत्व को बुला रहे हैं।

श्रीवत्स ने बोधिसत्व को एड़ी से लेकर चोटी तक देखा और पूछा–"बताओ, तुम किस काम से आये हो?"

"मैं आपके दर्शन करने आया हूँ।" यह उत्तर देकर बोधिसत्व ने अपना सिर झुका लिया। श्रीवत्स ने फिर पूछा–"तुम ठहरे कहाँ हो?"

"अभी तक कहीं नहीं ठहरा हूँ। मैं अपनी पत्नी को शहर की सीमा पर छोड़ आया हूँ।" बोधिसत्व ने जवाब दिया।

"मेरे घर में तुम्हें ठहरने की इजाजत नहीं है! मुट्ठी भर अनाज देंगे। उसे ले जाकर मांड़ बना कर पी लो।" श्रीवत्स ने कठोर स्वर में कहा।

दूसरे ही क्षण एक सेवक अंजुली भर अनाज लाकर बोधिसत्व के झोले में डाल कर चला गया। बोधिसत्व अपनी पत्नी के पास लौट आये।

बोधिसत्व की पत्नी ने पूछा–"आपके दिली दोस्त ने क्या-क्या दिया है?"

"मित्र श्रीवत्स ने अंजुली भर अनाज देकर हमारा पिंड छुड़ा लिया है।" बोधिसत्व ने शांत स्वर में जवाब दिया।

"आप ने इसे क्यों स्वीकार कर लिया? हमने उन्हें जो चालीस करोड़ मुद्राएं दी हैं, उसका फल है यह?" पत्नी ने क्रोध में आकर पूछा।

आँसू भरने वाली अपनी पत्नी को सांत्वना देते हुए बोधिसत्व शांत स्वर में बोले–"चाहे जो हो, मित्रों के बीच शत्रुता का भाव पैदा नहीं होना चाहिए। इसीलिए मैंने यह अनाज स्वीकार कर लिया है।"

पति-पत्नी यों बातचीत कर रहे थे, तभी एक सेवक उस रास्ते से आ गुज़रा। इसके पहले बोधिसत्व ने अपने जिन सेवकों को बांट कर दिया था, उनमें से वह एक था। उसने अपने पुराने मालिक को

पहचान लिया और उनके पैरों में गिर कर पूछा–"आप यहाँ पर कैसे आये?"

बोधिसत्व ने उसे सारा वृत्तांत सुनाया। इस पर वह सेवक बड़ा दुखी हुआ। इसके बाद बोधिसत्व और उनकी पत्नी को घर ले गया। उन्हें खाना खिलाकर उनके ठहरने के लिए एक कमरा दे दिया। इसके बाद उसने अपने साथी सेवकों को यह खबर सुनाई।

धीरे-धीरे करोड़पति श्रीवत्स के मित्र-द्रोह का समाचार काशी राजा के कानों में पड़ा। काशी राजा ने बोधिसत्व को बुलवाकर पूछा–"क्या यह बात सच है कि आप ने श्रीवत्स को चालीस करोड़ मुद्राएं दी हैं?"

बोधिसत्व ने राजा को आदि से अंत तक सारा समाचार सुनाया। इस पर राजा ने श्रीवत्स को बुला भेजा, उसे बोधिसत्व को दिखाते हुए पूछा–"यह बात सच है कि तुमने इस सज्जन के द्वारा धन की सहायता पा ली है?"

"जी हाँ महाराज, सच है!" श्रीवत्स ने कांपते हुए जवाब दिया।

"तब तो तुमने उस सहायता के बदले इनके प्रति कैसा व्यवहार किया है?" राजा ने पूछा।

श्रीवत्स ने लज्जा के मारे अपना सिर झुका लिया। इसके बाद राजा ने अपने मंत्रियों से सलाह-मशविरा करके श्रीवत्स की सारी संपत्ति बोधिसत्व के हाथ सौंपने का फ़ैसला सुनाया।

"बोधिसत्व ने राजा से निवेदन किया– "महाराज, मुझे दूसरों की संपत्ति एक कौड़ी भी नहीं चाहिए। मेरी संपत्ति मुझे वापस कर दे तो मैं खुश हो जाऊँगा!"

इस पर राजा ने श्रीवत्स के द्वारा बोधिसत्व को चालीस करोड़ मुद्राएं दिला कर उन्हें समझाया–"अपात्र दान कभी नहीं करना चाहिए।"

इस प्रकार बोधिसत्व फिर से धनवान बनकर दान-धर्म करते कई वर्षों तक सुखी रहे।

युवान च्वांग यात्राएं-१

ई. सन् सातवीं शताब्दी की यह घटना है ! चीन की सरकार ने यह घोषणा की कि चौदह भिक्षुओं का भार सरकार उठायेगी, यह घोषणा सुनकर सैकड़ों भिक्षु राजा के दर्शन करने पहुंचे, उन चौदह भिक्षुओं में से बारह साल का युवान च्वांग एक था।

बढ़ती उम्र के साथ युवान च्वांग के अन्दर ज्ञान प्राप्त करने की लालसा भी बढ़ती गई। बौद्ध धर्म के बारे में चीन के भिक्षु जो उपदेश दे रहे थे, उनसे वह संतुष्ट न था। उसने भारत में जाने की राजा से अनुमति मांगी। राजा ने इनकार किया, फिर भी युवान भारत में जाने की अपनी इच्छा को रोक न पाया। वह चल पड़ा, मगर देश की सीमा पर पकड़ा गया।

युवान ने पहरेदारों को बताया कि वह एक बार भारत देश की यात्रा करने की तीव्र इच्छा रखता है। पहरेदारों ने उसकी ईमानदारी पर खुश होकर उसे छोड़ दिया। एक वृद्ध ने उसे एक बूढ़ा घोड़ा पुरस्कार में दे दिया। एक बौद्ध मतावलंबी ने युवान को मार्ग दिखाने को मान लिया, लेकिन उस दुर्गम पहाड़ी तलहटी के रास्ते को देख डरकर वह वापस लौट गया।

भयंकर रेतीले मैदानों में युवान ने जानवरों तथा मनुष्यों के कंकालों को ही अपने मार्गदर्शक मानकर अपनी यात्रा चालू की । एक बार वह प्यास के मारे बेहोश होने की हालत में था, तब उस बूढ़े घोड़े ने उसे रेगिस्तान के एक तालाब के पास पहुँचा दिया ।

युवान ने अपनी प्यास बुझा ली, फिर अपनी यात्रा चालू करके तुरफान नामक प्रदेश में पहुँचा । उस प्रदेश के राजा ने युवान च्वांग का स्वागत किया, उसका सत्कार किया और उसके पांडित्य पर मुग्ध होकर उसे अपना गुरु बना लिया । लेकिन थोड़े दिन बाद युवान ने अपनी यात्रा की तैयारी की, इस पर राजा ने आपत्ति उठाई ।

लाचार होकर युवान ने अनशन व्रत धारण किया । राजा ने भांप लिया कि युवान को अनुमति न देने पर वे अपने गुरु की मृत्यु का कारण बन जायेंगे, तब युवान को अनुमति दी और उसके अंग रक्षकों के रूप में अपने कुछ सिपाहियों को उसके साथ भेज दिया । वे सिपाही युवान को भारत की सीमा पर छोड़कर वापस लौट गये ।

इस प्रकार युवान च्वांग भारत देश में पहुँचा। उन दिनों में यह विश्वास था कि नगरहर प्रदेश की एक पहाड़ी गुफा में गौतम बुद्ध की काया शाश्वत रूप से सुरक्षित रखी गई है। युवान उस गुफा में पहुँचा। ध्यान में मग्न होकर तेजोमय बुद्ध का साक्षात्कार पाया।

इसके बाद जब एक बार युवान प्रयाग क्षेत्र में जाने के लिए नाव पर यात्रा कर रहा था, तब कुछ लुटेरों ने उसे पकड़ लिया और उसको सर्वलक्षण सुशोभित मानकर देवी की बलि देने के लिए अपने साथ ले जाने लगे। उस हालत में युवान के साथ रहने वाले असहाय हो देखते रह गये।

लुटेरे युवान च्वांग की बलि देने के लिए अपनी देवी की मूर्ति के सामने खींचकर ले गये। उसने बुद्ध से प्रार्थना की कि कम से कम अगले जन्म में अपने मन के कार्य को पूरा करने की शक्ति प्रदान करे। इसके बाद उसने डाकुओं से बताया कि वह देवी की बलि होने के लिए बिलकुल तैयार है।

दूसरे ही क्षण बहुत बड़ा तूफान उठा। चारों तरफ़ के पेड़-पौधे भयंकर ध्वनि के साथ जड़ सहित उखड़ कर गिरने लगे। उस हालत में युवान च्वांग के साथी यात्रियों में से एक ने डाकुओं को समझाया कि तुम लोग अगर इस महात्मा की बलि दोगे तो तुम्हारा सर्वनाश निश्चित है।

इस पर डाकू युवान च्वांग को छोड़ कर उसके पैरों पर गिर पड़े। युवान ने डाकुओं को समझाया—"तुम लोग जो पाप पूर्ण कार्य कर रहे हो, उनके बदले में एक दिन ज़रूर भयंकर दण्ड पाओगे। तुम लोगों ने दूसरों को जैसे सताया, वैसे तुम लोग भी एक न एक दिन दूसरों के द्वारा सताये जाओगे।"

युवान च्वांग के मुंह से ये बातें सुनते ही डाकुओं ने अपने सारे हथियार गंगाजी में डाल दिये। उन लोगों ने युवान को वचन दिया कि आइंदा वे लोग साधु जैसा जीवन बितायेंगे, इस पर युवान बड़ा प्रसन्न हुआ और उन्हें हृदयपूर्वक आशीर्वाद देकर अपनी आगे की यात्रा चालू कर दी।

—(अगले अंक में समाप्त)

सावधानी

एक दिन प्रदीप नामक युवक ने मंत्री के पास जाकर राज दरबार में नौकरी दिलाने की प्रार्थना की। मंत्री ने उसे समझाया–"सुनो, सुलक्षण नामक एक युवक मेरी सिफ़ारिश पर राज दरबार का सेवक नियुक्त हुआ। वह आज राजा का सलाहकार बन बैठा है। तुम गुप्त रूप से उसको मार डालोगे तो मैं तुम्हें राजा के यहाँ अच्छी नौकरी दिलाऊँगा।"

मंत्री का सुझाव अमल करके प्रदीप राज दरबार में नौकर बना। इसके बाद एक बार प्रदीप ने राजा को शिकार खेलते वक्त जान के ख़तरे से बचाया। दूसरी बार युद्ध में उसने राजा के प्राण बचाये और साथ ही उन्हें विजय दिलाई।

प्रदीप की सेवाओं से संतुष्ट होकर राजा ने उससे पूछा–"तुम जो भी चीज मांगोगे, मैं दे दूंगा!" प्रदीप ने राजा से निवेदन किया कि मंत्री की पुत्री के साथ उसका बिवाह करें।

मंत्री की पुत्री के साथ प्रदीप का विवाह निश्चित हुआ। विवाह की वेदी पर जाते वक्त प्रदीप से मंत्री ने पूछा–"मेरे दामाद, राजकुमारी मेरी पुत्री से ज्यादा सुंदर है। तुमने राजा से राजकुमारी के साथ तुम्हारी शादी कराने के लिए क्यों नहीं पूछा? क्या तुम डर गये?"

"बात यह नही; सुलक्षण की हुई दुर्गति मेरे लिए भी न हो, इस ख़्याल से मैं सचेत रह गया।" प्रदीप ने ठण्डी सांस लेकर कहा।
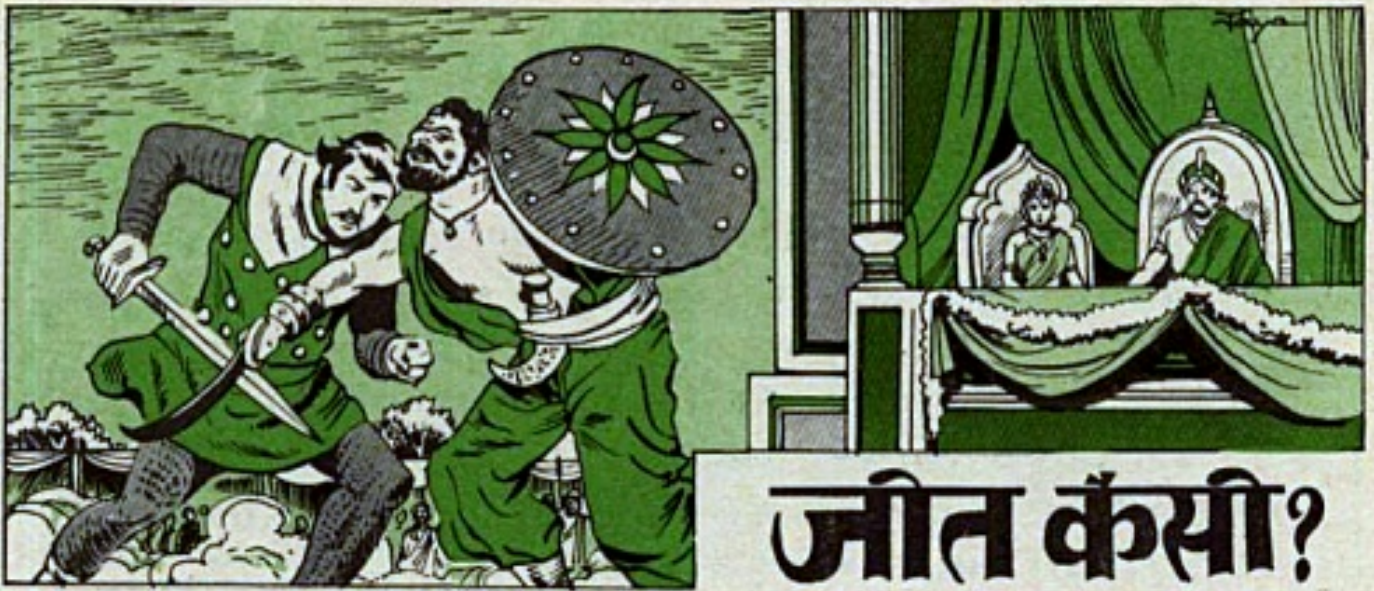
जीत कैसी?

अश्व राज्य की युवरानी माधवी युद्ध-विद्याओं के प्रति बड़ा शौक रखती थी। इकलौती पुत्री होने की वज़ह से महाराजा शौर्यवर्मा ने राजकुमारी को आनंद योगी नामक पंडित के यहाँ तर्क, गणित आदि शास्त्रों के साथ तलवार चलाना, घुड़सवारी वगैरह विद्याएँ भी सिखलाईं।

अश्व राज्य का सेनापति इंद्रजित अचानक बीमार होकर मर गया। इसलिए उस पद की पूर्ति करने की ज़रूरत आ पड़ी। उसके लिए एक योग्य व्यक्ति का चुनाव करने के लिए राजा ने एक प्रतियोगिता चलाई।

उस प्रतियोगिता में भाग लेने के लिए कई शहरों से अनेक वीर आ पहुंचे। उनमें रवीन्द्र, मुरारी तथा फणीन्द्र नामक युवकों ने अपने अपूर्व साहस का प्रदर्शन करके प्रेक्षकों की प्रशंसाएँ प्राप्त कीं। उनके बीच अन्य प्रतियोगिताओं के साथ तलवार की लड़ाई का भी प्रबंध किया गया।

उस प्रतियोगिता में रवीन्द्र मुरारी के हाथों में हार गया। एक घंटे के विश्राम के बाद मुरारी और फणीन्द्र के बीच तलवार की लड़ाई की प्रतियोगिता चलाई गई। इस बार मुरारी फणीन्द्र के हाथों में हार गया।

राजा ने प्रेक्षकों को संबोधित कर कहा—"आज की प्रतियोगिता में रवीन्द्र, मुरारी तथा फणीन्द्र ने अपनी प्रतिभा का अच्छा परिचय दिया है। फणीन्द्र ने बाक़ी दोनों प्रतिद्वन्द्वियों को हराया है, इसलिए..." इन शब्दों के साथ राजा कुछ कहने को हुए, तब उनकी बगल में बैठी राजकुमारी ने उठकर कहा—"पिताजी, कृपया मेरा निवेदन सुनिये।"

रमेश गुप्त

इस पर राजा के साथ सभी प्रेक्षकों ने राजकुमारी की ओर आश्चर्यपूर्वक देखा। राजकुमारी ने प्रेक्षकों से कहा–"महाराजा के कहे अनुसार फणीन्द्र बड़े ही प्रतिभावान हैं, पर मुरारी तथा रवीन्द्र ने भी अपनी अद्भुत प्रतिभा प्रदर्शित की है। वास्तव में बात यह है कि फणीन्द्र ने मुरारी को हराया है, लेकिन रवीन्द्र को नहीं; इसलिए कल फिर मुरारी तथा रवीन्द्र को एक और मौक़ा देना उचित होगा।"

राजा ने अपनी पुत्री के सुझाव को स्वीकार किया। दूसरे दिन रवीन्द्र तथा फणीन्द्र के बीच खड्ग युद्ध की प्रतियोगिता हुई। सभी लोग यह सोच रहे थे कि फणीन्द्र की ही जीत होगी। मगर रवीन्द्र को विजयी देख सब आश्चर्य में आ गये। एक घण्टे के विराम के बाद रवीन्द्र और मुरारी के बीच स्पर्धा हुई। उसमें भी रवीन्द्र ने मुरारी को पराजित किया।

अप्रत्याचित इस घटना को देख राजा विस्मय में आ गये। वे तत्काल कोई निर्णय न कर पाये, उन्होंने अपनी पुत्री की ओर देखा। इस पर राजकुमारी माधवी ने समझाया–"कल के परिणाम को देख आज का चुनाव कुछ पेचीदा सवाल बन गया। बात यह है कि आज रवीन्द्र ने अलग-अलग से दोनों प्रतिद्वन्द्वियों को हराया है। इससे यह साबित होता है कि रवीन्द्र सबसे ज़्यादा समर्थ व्यक्ति हैं। फिर भी कल एक बार और उनके प्रतिद्वन्द्वियों को

मौक़ा देना उचित होगा। उस प्रतियोगिता के परिणाम देख सेनापति के चुनाव का निर्णय किया जा सकता है।"

इस सुझाव के अनुसार तीसरे दिन फिर फणीन्द्र और मुरारी के बीच प्रतियोगिता हुई। उसमें फणीन्द्र हार गया। एक घंटे के विराम के बाद मुरारी तथा रवीन्द्र के बीच प्रतियोगिता हुई, उसमें मुरारी हार गया। इस पर राजा ने रवीन्द्र की सेनापति के पद पर नियुक्त करने की घोषणा की। सबने अपनी सम्मति देते हुए हर्ष ध्वनि की।

उस दिन शाम को राजा ने राजकुमारी से कहा–"बेटी, तीन दिन पहले खड्ग युद्ध की प्रतियोगिता के समाप्त होते ही मैंने फणीन्द्र को सेनापति के पद पर नियुक्त करना चाहा, लेकिन तुमने इस प्रतियोगिता को दो दिन तक और बढ़ाया। इससे यह साबित हुआ कि उन तीनों में रवीन्द्र ही समर्थ व्यक्ति है! तुम्हारे मन में इस तरह तीन बार प्रतियोगिता चलाने का विचार कैसे पैदा हुआ?"

"पिताजी, पहले दिन की प्रतियोगिता के समय मुझे ऐसा लगा कि रवीन्द्र खड्ग-विद्या में अपनी कोई विशेषता रखता है। मगर मेरे विचार के विपरीत वह खड्ग-युद्ध में हार गया। बाक़ी दो वीरों के बाद उसे अपनी शक्ति का प्रदर्शन करना पड़ा। इस कारण संभवतः वह थक गया होगा! उसी वक़्त मुझे अपने गुरु आनंद योगी का स्मरण हो आया। वे अक्सर कहा करते थे कि केवल एक परीक्षा के आधार पर किसी व्यक्ति की शक्ति और सामर्थ्य का निर्णय करने के बदले कई परीक्षाओं के द्वारा उसकी वास्तविक सामर्थ्य का पता लगाना सदा उत्तम तरीक़ा होता है। इस प्रकार मेरे अनुमान के मुताबिक़ रवीन्द्र बाक़ी दोनों वीरों को हरा सके।" माधवी ने कहा।

अत्यंत प्रधान पद सेनापति के चुनाव के मामले में राजकुमारी माधवी ने जो विवेक प्रदर्शित किया, उस पर राजा बहुत ही प्रसन्न हुए।

उलट फेर

श्रीपुर में दो बड़े व्यापारी अड़ोस-पड़ोस में रहा करते थे। उनकी पत्नियाँ सुशीला और जानकी के बीच गहरी दोस्ती थी। एक बार उस गाँव के अष्ट लक्ष्मी के मंदिर में उत्सव मनाया गया। उसमें भाग लेने सुमती नामक औरत आई। सुमती के साथ सुशीला और जानकी की अच्छी मैत्री हुई। दोनों ने सुमती को अपने-अपने घर निमंत्रित किया। सुमती ने उन दोनों के घरों के वैभव को देख कहा–"मेरे पति भी भारी पैमाने पर व्यापार करते हैं, फिर भी हमारा घर ज्यादा संपन्न नहीं दिखाई देता, इसकी वजह क्या है!"

कहा जाता है कि सुशीला दरिद्र देवी का आमंत्रण करने का मंत्र जानती है। उस देवी के दर्शन करके उसने यह वर पाया है कि दरिद्र देवी उसके घर तक न पटके। इसी तरह जानकी ने लक्ष्मी देवी का मंत्र जापकर उस देवी को प्रत्यक्ष बनाया और उससे यह बरदान पाया कि वह जानकी के घर को छोड़कर न जावे।

सुमती ने दोनों मंत्र सीख कर जपना शुरू किया। इस पर दोनों देवियाँ प्रत्यक्ष हुईं। लक्ष्मी देवी ने दरिद्र देवी से कहा–"तुम दरिद्र देवी हो, इसलिए मुझे पहले सुमती को वर देने दो।" ये शब्द कहकर उसने सुमती से पूछा–"बताओ, तुम कैसा वर चाहती हो?"

दोनों देवियाँ देखने में समान थीं; इसलिए सुमती उन दोनों का अंतर समझ न पाई, लक्ष्मी देवी से बोली–"देवी, कृपया तुम मेरे घर में प्रवेश न करो।" इस पर लक्ष्मी देवी "अच्छी बात है!" कहकर अदृश्य हो गई। इसके बाद सुमती ने दरिद्र देवी से निवेदन किया–"देवी, आप कृपया कभी मेरे घर को न छोड़ियेगा।" फिर क्या था, एक हफ़्ते के अन्दर सुमती का पति अपने व्यापार में सब कुछ खो बैठा। सुमती ने लोभ में पड़कर इस तरह दोनों देवियों की आराधना न की होती तो ऐसा न होता।

सच्चा इन्साफ़

गरीबचन्द एक माली था। वह एक दिन अपने मालिक के बगीचे में पौधे रोपने के लिए गड्ढे खोद रहा था। उस वक़्त अचानक उसके पीछे जूतों की आहट सुनाई दी। गरीबचन्द चौंक पड़ा और उसने झट पीछे मुड़कर देखा, कोई धनी लगनेवाला सज्जन उसे दिखाई दिया। वह कोट, बूट, टोपी और चश्मे पहने हुए था। वेष-भूषा से वह कोई बड़ा व्यक्ति मालूम हो रहा था। इस पर गरीबचन्द ने उठ कर उनको प्रणाम किया।

"सुनो, क्या मालो गरीबचन्द तुम्हीं हो?" उस सज्जन ने पूछा।

"जी हाँ, साहब!" गरीबचन्द ने विनयपूर्वक जवाब दिया।

"क्या तुम्हें याद है कि दस साल पहले तुमने किसके यहाँ काम किया था?" उस व्यक्ति ने पूछा।

"अजी साहब, याद क्यों नहीं है?" मैं सेठ लालचन्द के यहाँ माली का काम किया करता था। वे तो बड़े ही धर्मात्मा हैं। उनका नाम लेने पर जंगल में भी जावे, तो बड़ी आसानी से खाना मिल जाता है। वे कहीं विलायत में चले गये हैं। वरना मैं उनके यहाँ से यहाँ पर क्यों आ जाता?" गरीबचन्द ने अपनी कृतज्ञता प्रकट की।

"हाँ, हाँ! वे तो वहाँ पर..." आगे वह कुछ कह न पाया।

"वे कुशल हैं न?" गरीबचन्द ने बड़ी उत्सुकता से पूछा।

"भाई, इतमीनान से तो सुनो; यही बात मैं कहने जा रहा हूँ। बेचारे सेठ लालचन्द वहाँ पर अचानक बीमार पड़े और मर गये हैं!" नये सज्जन ने बताया। यह खबर सुनते ही गरीबचन्द एक दम

रो पड़ा। थोड़ी देर बाद संभल कर बोला—"सेठ लालचन्दजी जैसे व्यक्ति मशाल लेकर इस दुनिया में ढूंढने पर भी न मिलेंगे। वे एकदम धर्मप्रभु हैं।" इन शब्दों के साथ गरीबचन्द लालचन्द की तारीफ़ के पुल बांधने लगा। इसके बाद उसने पूछा—"क्या सेठजी आपके कोई रिश्तेदार लगते हैं?"

"नहीं, मैं तो उनका वकील हूँ! सेठजी ने मरने के पहले अपनी सारी जमीन-जायदाद और संपत्ति के संबंध में एक वसीयत लिखी है। उसमें उन्होंने हमारे गाँव की पाठशाला, अस्पताल, पुस्तकालय वगैरह संस्थाओं को बड़ी-बड़ी रक़में लिख दी हैं।"

यह समाचार सुनकर गरीबचन्द बड़ा खुश हुआ और उसने सेठजी की मन ही मन बड़ी तारीफ़ की।

इसके बाद वकील ने अपने कोट की जेब म से एक थैली निकालकर कहा—"लो, इसे तुम्हें देने के लिए वे मेरे हाथ सौंप गये हैं।" यों कहकर वकील ने गरीबचन्द के हाथ एक छोटी सी थैली थमा दी। उसे देख गरीबचन्द अवाक् रह गया। वह एक मुहर बंद थैली थी। उसे खोलने का तरीक़ा बेचारा देहाती गरीबचन्द जानता न था। इसलिए उसने वकील साहब से

पूछा—"साहब, इसे खोलकर दिखाइयेगा।" वकील ने मुहर खोलकर देखा, उसमें दो हज़ार रुपये थे।

गरीबचन्द अपनी आँखों पर यक़ीन नहीं कर पाया। कांपने वाले हाथों से उस थैली को लेकर उसने वकील को प्रणाम किया। तब अपनी झोंपड़ी में पहुँचा। गरीबचन्द ने अपनी ज़िन्दगी में पहली बार एक साथ इतनी रक़म देखी थी। दरअसल उसने सपने में भी यह बात नहीं सोची थी। मालिक सेठ लालचन्द के विलायत में जाने के पहले गरीबचन्द बरसों से उनके यहाँ माली का काम किया करता था। वह बड़ा ही ईमानदार था। पर

लालचन्द के चले जाने के बाद उसका एक मुंशी उनकी संपत्ति के सारे व्यवहार देखा करता था। वह मुंशी बड़ा ही धूर्त, बेईमान और कपटी था। उसके साथ गरीबचन्द की पटती न थी। इस वजह से गरीबचन्द को लाचार होकर वह काम छोड़ना पड़ा।

इस वक़्त गरीबचन्द एक मार्वाडी सेठ के यहाँ बगीचे में काम पर लगा था। उस सेठ के गुलाबचन्द नामक दस साल का एक लड़का था। वैसे वह बड़ा ही चुस्त था, मगर चोर था। वह गरीबचन्द के यहाँ अक़्सर आया-जाया करता था। सारा दिन वह गरीबचन्द को झोंपड़ी के इर्द-गिर्द खेल-कूद किया करता था। गरीबचन्द के हाथ जब दो हज़ार रुपयों की थैली लगी, तब उसके सामने बड़ी विकट समस्या पैदा हो गई। उसकी झोंपड़ी के कोई किवाड़ न थे। तिस पर गुलाबचन्द हमेशा उसकी झोंपड़ी के नज़दीक़ भटकता और मंडराया करता है। उसको कैसे वहाँ पर आने से मना करे?

यों गरीबचन्द ने कई तरह से सोचा-विचारा। आखिर उस दिन शाम को वह सबकी आँख बचाकर बगीचे के एक ऊँचे पीपल के पेड़ पर चढ़ गया और उसके खोखले में रुपयों की वह थैली छिपा दी। तब वह यह सोचते इतमीनान से घर पहुँचा कि अब उसे कोई पहचान नहीं सकता है।

इसके बाद गरीबचन्द ने अपने मालिक के पास जाकर यों कहने का अपने मन में निश्चय कर लिया—"मालिक, मैं अब बूढ़ा हो चुका हूँ। मैं अपने गाँव को लौट जाना चाहता हूँ। आप कृपया मुझे इजाज़त दीजिए।" फिर योजना बनाई कि दूसरे दिन सवेरे मालिक से अपनी तनख्वाह लेकर गाँव जाने की तैयारी करे। उसका ख्याल था कि सेठ लालचंद से प्राप्त धन से वह अपनी बची-खुची जिंदगी गाँव में ही बसर कर सकता है।

मगर गरीबचन्द की यह योजना उलट गई, न मालूम सेठ का लड़का गुलाबचंद ने गरीबचन्द को पेड़ के खोखले में थैली छिपाते कब देखा है, उसने चुपके से जाकर खोखले से थैली निकाली और उसे ले जाकर अपने पिता के हाथ सौंप दी। तब उन्हें बताया–"बाबूजी, हमारा माली गरीबचन्द इसे एक जगह छिपा रहा था। उसे देख मैं यह थैली उठा लाया हूँ। लीजिये, इसे अपने पास रखिये!"

रुपयों की उस थैली को देख कर सेठ खुशी के मारे फूला न समाया। थैली के रुपये गिनते उसने अपने बेटे की बातें ठीक से न सुनीं। सेठ बार-बार–"ठीक दो हज़ार रुपये! ठीक दो हज़ार रुपये!" कहते थैली के रुपयों की गिनती बार-बार करने लगा।

इसके बाद उस दिन रात को गरीबचन्द अपने मालिक के पास जाकर बोला–"मालिक, मुझे अचानक अपने गाँव जाने का काम आ पड़ा है। मैं यह कह नहीं सकता कि फिर कब लौट सकूँगा। इसलिए आप मुझे कृपया अपने गाँव जाने की इजाजत दीजिए।"

इसके जवाब में सेठ ने झूठी सहानुभूति दिखाते हुए कहा–"गरीबचन्द, अच्छी बात है, लेकिन गाँव जाने के पहले तुम्हें जो कुछ रक़म मिल सकती है, लेते जाओ। लेकिन एक बात याद रखो कि इस बुढ़ापे में तुम्हें दूसरी जगह ऐसा आराम देह काम का मिलना बड़ा मुश्किल है। चाहे जो हो, तुम दस साल से मेरे यहाँ अपने ही घर का आदमी बन कर रहे, इसलिए हमें इस बात का बड़ा दुख है कि तुम हमको छोड़ कर चले जा रहे हो!" यों सेठ ने अपनी झूठी सहानुभूति दिखाई।

प्रकट रूप में सेठ ने ये बातें तो कहीं, लेकिन अन्दर ही अन्दर वह यह सोचकर बड़ा खुश हो रहा था कि–"इसके दो हज़ार

रुपये हमें मुफ़्त में हाथ लग गये हैं। अब इसका पिंड छूटना ही सब तरह से अच्छा है!"

दूसरे दिन सवेरे गरीबचन्द अपनी तनख्वाह लेकर पीपल के पेड़ के पास पहुँचा। खोखले में अपनी थैली को सुरक्षित देख वह बड़ा खुश हुआ। वह सोचने लगा–"उफ़, इस दुनिया में न्याय और धर्म अभी तक बना हुआ है।" यों अपने मन में संतुष्ट होकर उस थैली को ले गरीबचन्द अपने गाँव चला गया।

थोड़ी देर बाद गुलाबचन्द अपने पिता के पास आकर बोला–"बाबूजी, गरीबचन्द बेचारा कैसा बदनसीब है! वह अपने को बड़ा ही अक्लमंद समझकर खुशी के मारे उछलता होगा। मैंने तो उसको खूब चकमा दिया है। जब थैली उसे मिली नहीं, तभी उसने अपने प्राण छोड़ दिये होंगे।"

सेठ ने मुस्कुराकर अपने बेटे को गोद में भरते हुए कहा–"बेटा गुलाब! जानते हो, मैंने वह थैली कहाँ छिपा रखी है? हरि, हर और ब्रह्मा तक को इसका पता न चलेगा! ऐसी हालत में बेचारा वह भोला देहाती गरीबचन्द इसका पता कैसे लगा सकता है!" यों कहकर वह अपनी अक़्लमंदी पर अपने-आप हँस पड़ा।

गुलाब ने बड़ी आतुरता के साथ पूछा–"बाबूजी, आपने उस थैली को कहाँ पर छिपा रखा है? कहाँ पर?"

सेठ ने गुलाबचन्द को अपने और निकट खींचकर उसके कान में गुप्त रूप से कहा–"बेटा, किसी को इसका पता न चले, समझे! हमारे बगीचे में पूरब की दिशा में जो पुराना पीपल का पेड़ है न? उसके खोखले में छिपा दी है।"

ये बातें सुन गुलाबचन्द चौंक पड़ा और बोला–"बाबूजी, गरीबचन्द ने भी उसी खोखले में तो छिपा रखा था? मैं उसी खोखले में से रुपयों की वह थैली उठा लाया हूँ।" यों कहते वह वहीं जमीन पर लुढ़क पड़ा।

तबादला

नागपुर में रमानाथ नामक एक कर्मचारी था। शादी के बाद थोड़े दिन तक पति-पत्नी की ज़िंदगी आराम से कट गई। लेकिन धीरे-धीरे उस दंपति के बीच हर छोटी सी बात को लेकर झगड़े व फिसाद होने लगे। इसका कारण पड़ोस में रहनेवाले बड़े अफ़सरों की पत्नियाँ कमला और गौरी हैं। वे अक्सर नये-नये गहने और क़ीमती रेशमी साड़ियाँ पहनकर रमानाथ की पत्नी विशालाक्षी के घर आ धमकतीं और अपने गहने और वस्त्रों की तारीफ़ के पुल बांध देतीं। उन्हें देख विशालाक्षी भी खुश हो जाती और उनकी तारीफ़ कर देती, मगर शाम को अपने पति के घर लौटते ही ऐसे गहने और साड़ियाँ खरीद लाने को उसे तंग करती।

रमानाथ ने शांति के साथ विशालाक्षी को अपनी नौकरी, तनख्वाह का परिचय कराया, मगर विशालाक्षी खीझकर बताती कि यह सब मैं नहीं जानती, मुझे भी ऐसे गहने और रेशमी साड़ियाँ ला दो!

रमानाथ थोड़े दिन तक अपनी पत्नी की शिकायत सहन करता रहा, आखिर उसने अपने ससुर के नाम चिट्ठी लिख दी कि वह अपनी बेटी को अपने घर बुला ले जाये। विशालाक्षी का पिता जगपति यह सोचकर अचरज में आ गया कि सीधा-सादा दीखनेवाला उसका दामाद यों कैसे बदल गया, यों विचार कर जगपति उसी वक़्त नागपुर के लिए चल पड़ा।

अपने पिता को देखते ही विशालाक्षी ने आँखों में आंसू भरकर कहा- "बाबूजी, तुमने एक कंजूस के साथ मेरी शादी करके मेरी ज़िंदगी को बरबाद कर दिया है। तुम्हारे दामाद के साथ काम करने वाले अफ़सरों की पत्नियाँ कैसे अच्छे गहने और

यमुना वार्ष्णेय

सुंदर साड़ियाँ पहनती हैं। उन औरतों की बगल में खड़े होने में मुझे शर्म लगती है।"

इसपर जगपति ने अपनी बेटी को मीठी बातें सुनाकर शांत किया, इसके बाद उसने एकांत में अपने दामाद से बात की।

जगपति सारी हालत समझ गया। उसने अपने दामाद को समझाया—"तुम दोनों के बीच झगड़े का कारण अड़ोस-पड़ोस का प्रभाव है। इसे सुधारने का उपाय मैं सोच लेता हूँ।" यों समझा कर जगपति अपने घर चला गया।

इसके बाद एक महीने के अन्दर रमानाथ का गंगापुर नामक एक छोटे से शहर में तबादला हुआ। रमानाथ विशालाक्षी को लेकर गंगापुर पहुँचा। वहाँ पर रमानाथ ही सबसे बड़ा अफ़सर था।

विशालाक्षी के अड़ोस-पड़ोस में रहने वाले छोटे अफ़सरों की पत्नियाँ फ़ुरसत के वक़्त उसके पास आ जातीं और बड़े अफ़सर की पत्नी बनी विशालाक्षी की तारीफ़ करते न थकतीं—"बहन, आप की क़िस्मत को क्या कहे? सबके भाग्य में ये सारी चीज़ें बदी नहीं होती! आप बड़े अफ़सर की पत्नीं होकर भी हम से प्रेम के साथ मिलती-जुलती हैं।"

जगपति एक दिन गंगापुर आ पहुँचा। उस वक़्त रमानाथ ने अपने ससुर को बताया—"ससुरजी, इस शहर में आने के बाद विशालाक्षी बिलकुल बदल गई है। मुझे खुद आश्चर्य होता है!"

इस पर जगपति ने कहा—"मैंने तुम्हें पहले ही बताया था कि यह सब अड़ोस-पड़ोस का असर है। वहाँ के लोगों के ओहदे, गहने, साड़ियाँ और उनकी आर्थिक दशा के साथ तुलना करके विशालाक्षी दुखी हो जाया करती थी कि समाज में उनका स्तर कहीं नीचे है। यहाँ पर तो उसका स्तर और लोगों से कहीं ऊँचा है। तुम्हारा ओहदा भी यहाँ पर और लोगों से ऊँचे स्तर का है। चाहे जो हो, तुम दोनों बड़े प्रेम से मिल-जुलकर अपनी गृहस्थी चला लेते हो, मेरे लिए यही बड़ी खुशी की बात है!"

कुमारस्वामी के मन में अपने विवाह में विघ्न डालने वाले विघ्नेश्वर के प्रति क्रोध था। उन्होंने अपनी माँ से कहा–"माँ, बड़े भाई अयोग्य नहीं, तो योग्य कैसे बन सकते हैं? वे तो खाऊ ठहरे, ऐसे लोग महान कार्य कैसे कर सकते हैं?"

विघ्नेश्वर की आँखों में आँसू छल छलाये। वे बोले–"माँ, देखती हो न! छोटा भाई कैसी बातें करता है!..." इस पर पार्वतीजी को क्रोध आया। विघ्नेश्वर को अपने हृदय से लगाकर उन्हें समझाते हुए बोली–"बेटा, मैंने जो गुड़िया बनाई, तुम्हारे पिता ने उसे मार डाला और यह यों मजाक उड़ा रहा है। उनका यह अज्ञान उनके लिए लज्जा की बात होगी!"

"माँ, छोटा भाई तो अज्ञानी हो सकता है, लेकिन पिताजी कैसे हो सकते हैं? यह तो तुम्हारा भ्रम है! पागलपन है।" गणपति ने पूछा।

पार्वती ने सर झुका कर कहा–"बेटा, पागलपन मेरे लिए नहीं, उस महादेव शंकरजी का है। वरना विष्णुदेव के जगन्मोहिनी के अवतार को देख उनके पीछे पड़ जाते! और मजाक़ का कारण बन जाते?"

"इसके बाद क्या हुआ, माँ?" गणपति ने पूछा।

"कोई अनहोनी घटना ही घट गई है! सुना है कि उनके बीच भैरव नामक एक काले रंग का भूत जैसा लड़का हुआ है।" माँ ने समझाया।

८. प्रमथगणों का नेतृत्व

"माँ, यह बताओ, वह भैरव नामक लड़का कहाँ रहता है? मैं उसको देखना चाहता हूँ।" विघ्नेश्वर ने पूछा।

"वह कहीं रहता है, सुना है कि वह काले कपड़े पहनता है। उसके पास भूल से भी मत जाओ, उसे देख तुम डर जाओगे!" पार्वती ने समझाया।

"माँ, डरना क्या होता है? यह भी तो मुझे जानना है?" विघ्नेश्वर ने पूछा।

"शादी करने पर मालूम हो जाएगा!" पार्वती ने कहा।

"ओह, पति-पत्नी के माने ऐसा भयंकर होता है! इसीलिए तो माँ, मैं शादी करना नहीं चाहता!" गणेश ने कहा।

इस पर कुमारस्वामी बीच में दखल देते हुए बोले—"यही एक तुम महान कार्य करना चाहते हो, भैया? मैं अभी जाकर सूर्य की परिक्रमा करके लौट आता हूँ।" यों कहकर कुमारस्वामी मोर पर सवार हो उड़ चले। इसके बाद विघ्नेश्वर सीधे जाकर मेरु पर्वत पर चढ़कर सबसे ऊँचे शिखर पर बैठ गये। सूर्य मेरु पर्वत की परिक्रमा किया करते हैं! वहाँ पर कभी सूर्यास्त नहीं होता।

कुमारस्वामी बड़ी मेहनत के साथ सूर्य की परिक्रमा करके लौट आये, अपने बड़े भाई को मेरु पर्वत पर बैठे जान कर लज्जित हो उठे! पार्वती ने आश्चर्य में आकर कुमारस्वामी से पूछा—"हे कुमार, तुम सर झुकाये क्यों बैठे हो? आखिर बात क्या है?"

"मैं सूर्य की परिक्रमा करके आया, जब कि भैया सूर्य को ही अपने चारों तरफ़ घुमा रहे हैं। सच बताना हो तो बड़े भाई का कार्य ही महान है!" कुमारस्वामी ने कहा।

इस घटना के थोड़े दिन बाद पार्वतीजी ने फिर से विघ्नेश्वर की शादी की बात उठाई! इस पर विघ्नेश्वर ने जवाब दिया—"माँ, सुंदरता में तुम्हारी बराबरी करने वाली कोई युवती दिखाई दे तो मैं ज़रूर शादी करना चाहता हूँ।"

पार्वती का दिल कचोट उठा, वह बोलीं–"तब तो तुम बरामदे में बैठकर आने-जाने वाली कन्याओं को देखते रह जाओ!" यों कहकर वह चली गईं।

"जैसी तुम्हारी आज्ञा, माँ!" यों कहकर विघ्नेश्वर गली में बैठकर थोड़ी देर पूरब की ओर, फिर पश्चिम दिशा में, इसी तरह आठों दिशाओं की ओर मुखातिब हो देखने लगे।

विघ्नेश्वर की इन विचित्र चेष्टाओं को देख पार्वती ने पूछा–"क्यों बेटा, कहीं तुम्हें कोई सुंदर कन्या दिखाई दी?"

विघ्नेश्वर बोले–"माँ, मैं जिस किसी भी दिशा में देखता हूँ तो उस दिशा में जगज्जननी बनी तुम्हीं आठ हाथों के साथ दिखाई देती हो।"

ये बातें सुनकर पार्वतीजी प्रसन्नता के मारे तन्मय हो उठीं और बोलीं–"बेटा, विघ्नराजा, यह नियम है कि सभी देवताओं को पूरब की ओर मुख करके पूजा प्राप्त कर ले, लेकिन तुम चाहे जिस किसी भी दिशा में मुखातिब हो जाओ, पूजा पाने योग्य हो!" यों पार्वतीजी ने गणेशजी को वरदान दिया। इसके बाद पार्वतीजी विनायक की शादी की बात भूलकर अपने प्यारे पुत्र की मीठी-मीठी बातें शिवजी को सुना-सुनाकर खुश होने लगीं।

कुछ दिन बाद पार्वतीजी ने हठ पूर्वक विघ्नेश्वर की शादी का प्रसंग उठाया, तब विघ्नराजा ने समझाया–"माँ, छोटे भाई देवताओं के सेनापति के पद को संभाले

हुए हैं। वह एक क्या, दो कन्याओं के साथ भी शादी कर सकता है। मैं बैठे-बैठे अपना पेट भरता हूँ। तुम्हीं बताओ, ऐसी हालत में मैं कैसे शादी कर सकता हूँ?"

इस पर शिवजी ने समझाया—"तुम मेरे सारे प्रमथ गणों के गणपति बन जाओ!"

"पिताजी, आप प्रेमवश कह रहे हैं, लेकिन योग्यता भी तो होनी चाहिए। छोटा भाई सेनापति के काम में कुशल बन गया है। उसके रहते मुझे उस पद पर बैठने का अर्थ ही क्या है?" विघ्नेश्वर ने सवाल उठाया।
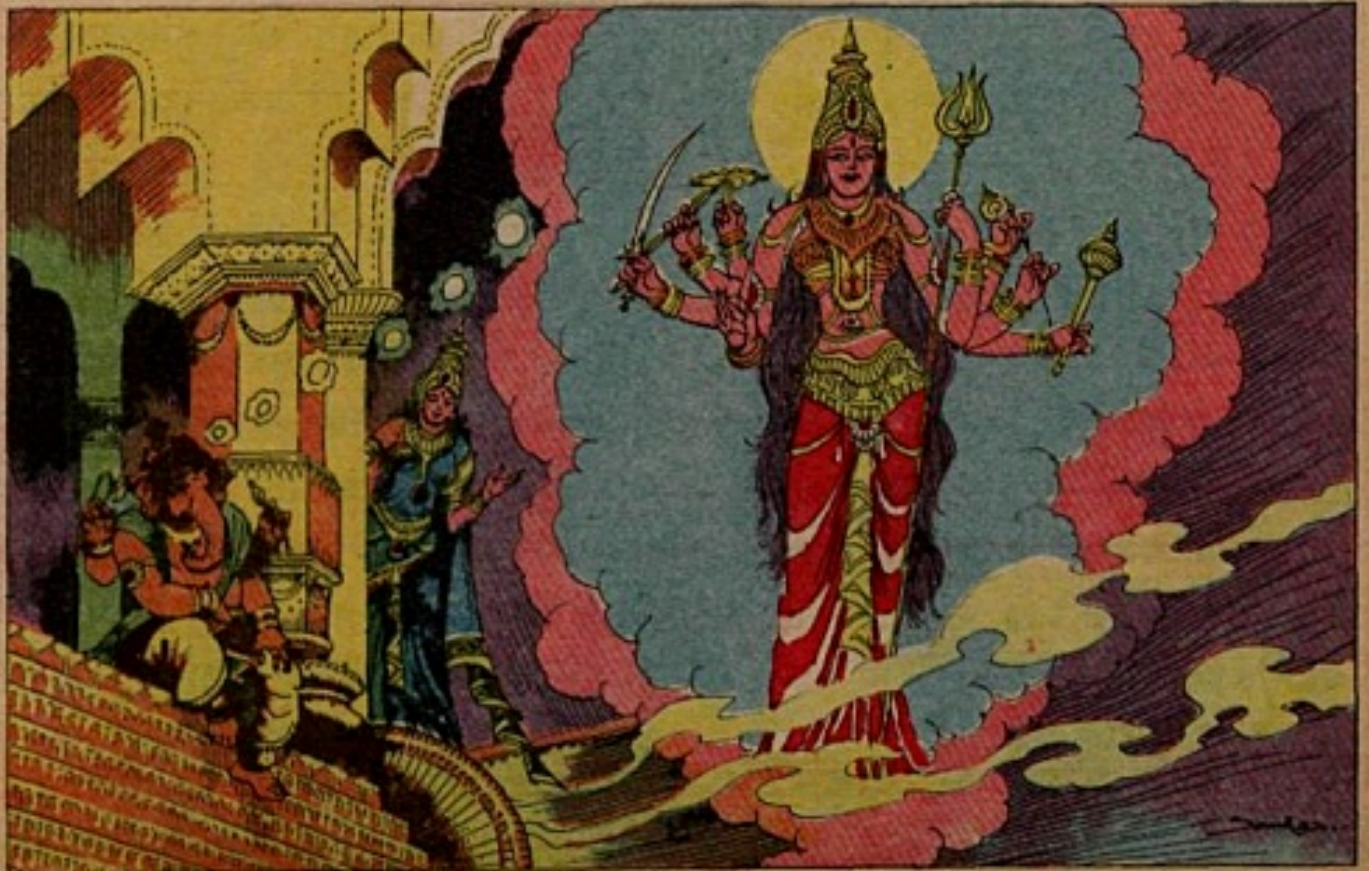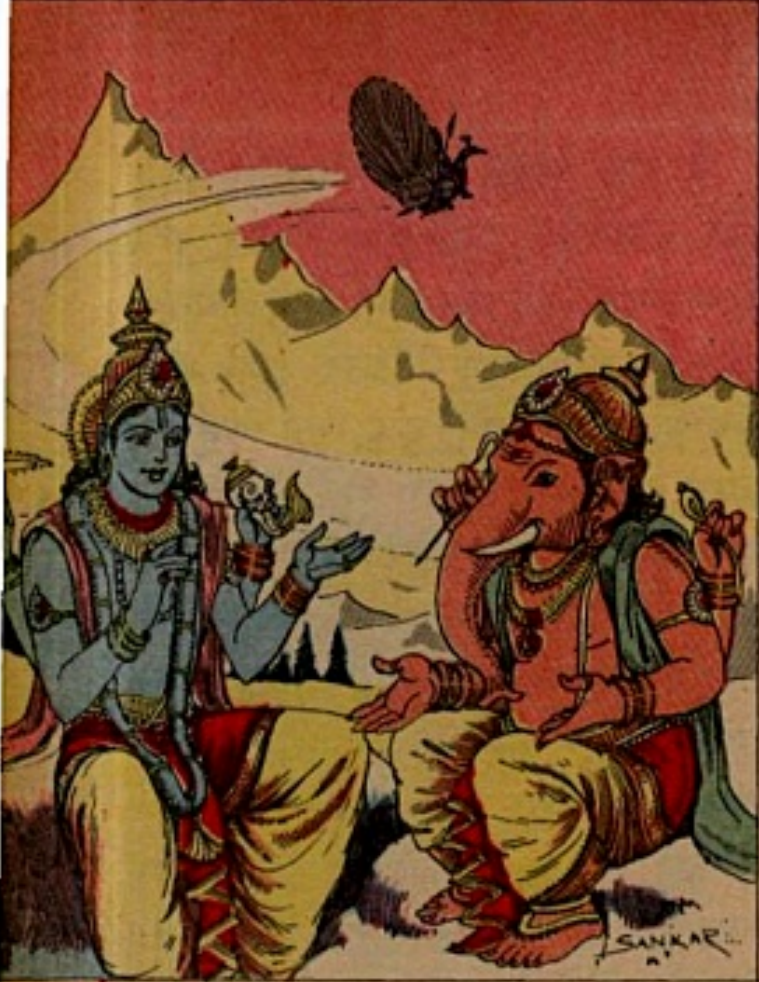
प्रमथों ने कुमारस्वामी को ही चुना। पर शिवजी ने कहा—"नहीं, मेरे गणों का गणनाथ विघ्नेश्वर ही हो सकता है। कुमारस्वामी तो देवताओं के सेनापति के पद पर पहले से है ही! अलावा इसके एक साथ दो पद संभालना कठिन भी है!"

विघ्नेश्वर ने कहा—"पिताजी, मेरे ख्याल से कोई परीक्षा लेकर उसमें सफल निकलने वाले को गणों का अधिपति बनाना उचित होगा।"

इस पर देवताओं तथा प्रमथों ने मिल कर एक परीक्षा रखी। वह यह थी कि पृथ्वी पर के समस्त तीर्थ और पुण्य क्षेत्रों की जो व्यक्ति पहले परिक्रमा करके लौटेगा, वही विजयी माना जाएगा।

इस शर्त के मुताबिक़ कुमारस्वामी मोर पर सवार हो उड़ चले, पर विनायक लुढ़क कर बैठ गये।

उस वक़्त विष्णु विघ्नेश्वर को एकांत में ले जाकर बोले—"बेटा, हम तुम्हारे प्रति बहुत ज्यादा वात्सल्य भाव रखते हैं, तुम्हारी हार सभी देवताओं की हार मानी जाएगी। हमारा अपमान कराना तुम्हारे लिए उचित नहीं है। अलावा इसके अपने पिता की महानता को साबित करने पर ही पुत्र का जन्म सार्थक होता है। तुम्हें परिक्रमा करने की जरूरत नहीं है।

हमारे कहे मुताबिक़ करो।" इन शब्दों के साथ विष्णु ने विनायक के कान में गुप्त रूप से कोई उपदेश किया।

पार्वतीजी ने ठण्डी सांस लेकर विष्णु की ओर कृतज्ञता पूर्ण दृष्टि दौड़ाई।

इसके बाद विघ्नेश्वर आसन लगाकर आँखें मूंदकर शिव पंचाक्षरी मंत्र का जाप करने लगे।

कुमारस्वामी जहाँ भी गये, वहाँ पर उन्हें यह समाचार मिलता रहा कि उनसे पहले ही विघ्नेश्वर चूहे के वाहन पर आकर उस तीर्थ में स्नान करके चले गये हैं। इस पर उन्हें आश्चर्य होने लगा। वे निराश हो लौट आये और अपनी हार मानते हुए विघ्नेश्वर को विजयी घोषित किया।

विघ्नेश्वर अपने छोटे भाई के हाथों में हाथ डाले शिवजी के पास ले गये और उन्हें सच्चा समाचार सुनाया—"मेरे छोटे भैया! न मेरी जीत हुई है और न तुम्हारी हार। हम दोनों केवल निमित्त मात्र हैं। जीत तो पिताजी की ही हो गई है! क्योंकि शिव पंचाक्षरी की महिमा ही कुछ ऐसी है! जीत शिवनाम की हुई और जिताने वाले श्री महा विष्णु हैं!"

इसके बाद विघ्नेश्वर और कुमारस्वामी ने अपने पिता के एक-एक चरण पकड़ कर उन्हें प्रणाम किया।

कुमारस्वामी सभी लोगों के बीच खड़े होकर बोले—"विघ्नेश्वरजी के लिए प्रमथ गणो का अधिपति होने का पट्टाभिषेक

शिवगण के रूप में माने जाते हैं। ऐसी हालत में विघ्नेश्वर हमारे अधिपति कैसे बन सकते हैं? गणपति कहलाने के लिए भी तो उनका अपना कोई दल या गण नहीं है। ऐसी स्थिति में गणाधिपति होने का पट्टाभिषेक ही क्यों?"

ये बातें सुन शिवजी नाराज़ हो गये और प्रमथ गणों को डांटते हुए बोले–"क्या तुम लोग मेरे निर्णय की आलोचना करनेवाले बड़े लोग हो गये हो!"

विघ्नेश्वर शांत चित्त हो बोले–"हाँ, हाँ, ये लोग ठीक ही कहते हैं! मेरे गण कहाँ पर हैं? कहाँ? नहीं हैं! शायद नहीं हैं! हाँ, जब पुत्र गणपति के रूप में था, उस समय मेरा अपना दल था, मुझे ऐसा स्मरण आता है। लेकिन अब वे गण कहाँ पर हैं?"

इस पर करोड़ों विघ्नेश्वर जैसे लोग सभी दिशाओं से चले आये और विघ्नेश्वर के गणों के रूप में खड़े हो गये।

उन सबके चार हाथ थे और चारों हाथों में अनेक प्रकार के आयुध, उपकरण तथा चित्र-विचित्र वस्तुएँ थीं। कुछ लोगों के हाथों में लेखनियाँ, कूँचियाँ व रंग थे तो कुछ लोगों के हाथों में शूल, धनुष-बाण, तलवार व गदा थे। कुछ लोगों के हाथों में हँसियाँ, हथौड़े, तलवार, करौत, छेनियाँ

शीघ्र होना चाहिए। शिवजी की आज्ञा सबके लिए शिरोधार्य है!"

इस पर देवता खुश हुए। सिद्ध, साध्य, यक्ष, भूत गण आदि बहुत ही प्रसन्न हो उठे। प्रमथ गणों के प्रमुख व्यक्ति भृंगीश्वर, श्रृंगीश्वर, चंडीश्वर और नंदीश्वर ने इसका विरोध किया। इसका कारण यह था कि इसके पूर्व विघ्नेश्वर ने पुत्र गणपति के रूप में उनके घमण्ड को तोड़ डाला था।

इसी वजह से उन लोगों ने अपना क्रोध प्रकट करते हुए कहा–"कुमारस्वामी तो देवगणों की सेनाओं के अधिपति हैं; हम लोग पहले से ही शिवजी के विश्वासपात्र
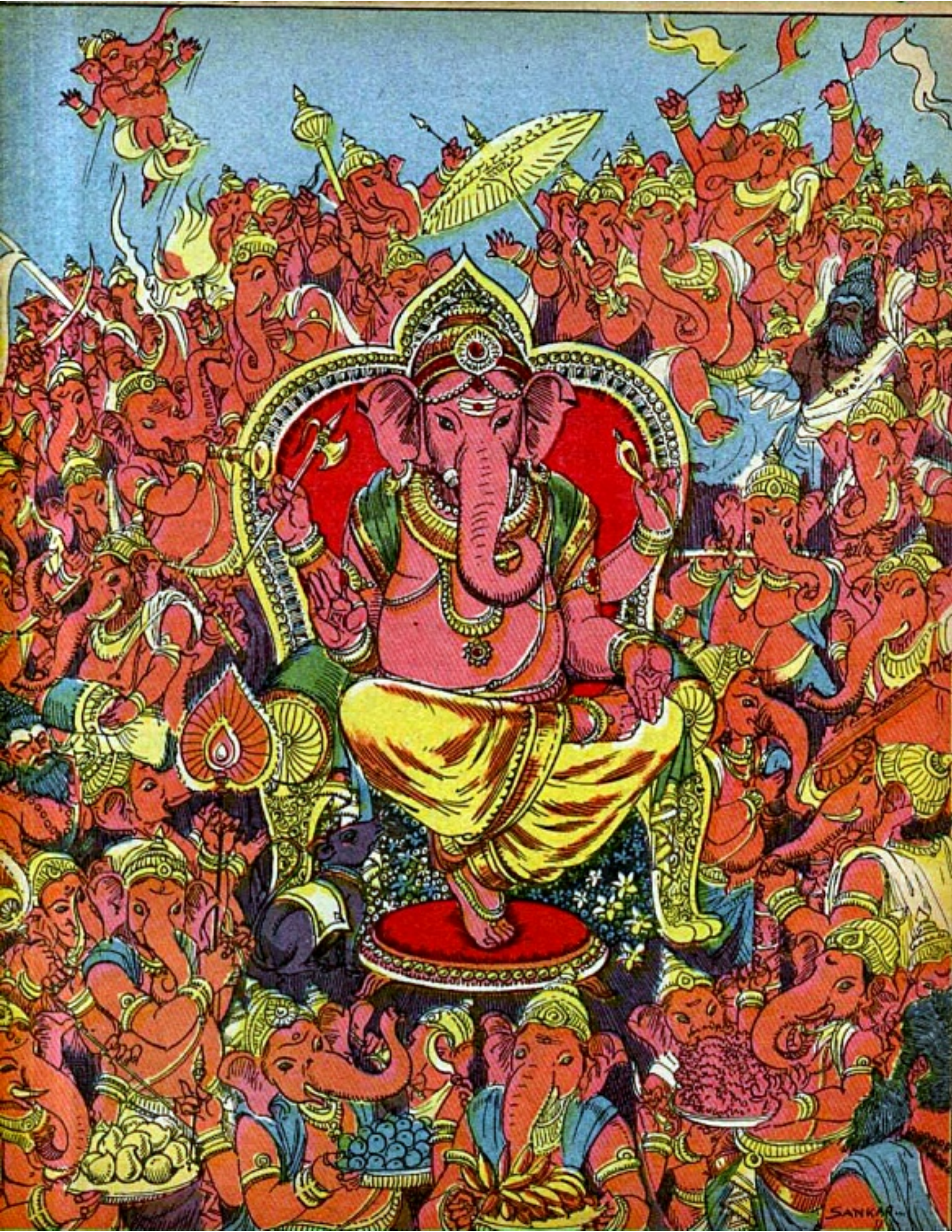
आदि थीं, तो कुछ लोग वीणा, मृदंग, मुरली और डफलियां बजा रहे थे। कुछ लोग जड़ी-बूटियां, औषध, हल, करघे, रत्नाभूषण, फूल-मालाएं, फल आदि अपने हाथों में लिये हुए थे। उनके बीच देवता तथा प्रमथ गण यत्र-तत्र दिखाई दे रहे थे।

विघ्नेश्वर रूपधारी कुछ लोग आसमान में उड़ते अंतरिक्ष की ओर बढ़ रहे थे। उन गणों के अधिपतियों के हाथों में चँवर आदि डोल रहे थे। उनके हाथों में लाल तथा अन्य कई रंगों के झण्डे थे, जो आसमान में फहरा रहे थे। वे लोग रत्न खचित एक सिंहासन को ले आये। विघ्नेश्वर को उस पर बिठाया, तब छत्र व चँवर धारी आ खड़े हुए। श्वेत छत्र मोतियों के जालर के साथ सुशोभित हुआ। छोटा चूहा सिंहासन के नीचे नाचने लगा।

इस पर पार्वती एक बार और अपने को भूलकर सिंहासन पर विराजमान विघ्नेश्वर को प्रणाम करने को हुईं, तब विघ्नेश्वर अपने हाथ के संकेत के द्वारा मना करते हुए बोले—"माँ, ऐसा मत करो; मैं तुम्हारा प्यारा पुत्र हूँ।" उस वक़्त सब लोग अदृश्य हो गये। विघ्नेश्वर अकेले रह गये। उन्होंने विनयपूर्वक अपनी माता को प्रणाम किया।

उसी वक़्त "विघ्नेश्वर!" नामक पुकार शंख ध्वनि जैसी सुनाई दी। पुकारने वाले विष्णु थे, विघ्नेश्वर ने उस ओर देखे बिना कहा—"हाँ, मैं जानता हूँ कि आप क्या कहने जा रहे हैं?"

"तुम्हें मालूम हो, पर सबको मालूम होना चाहिए न! यही बात मैं कहता हूँ।" इन शब्दों के साथ विष्णु ने समझाया—"इस कहावत के मुताबिक़ कि विघ्नेश्वर के विवाह के लिए एक हज़ार विघ्न होते हैं, विघ्नेश्वर ने भी अपनी शादी में जो एक हज़ार विघ्न पैदा कर लिये थे, वे पूरे हो गये, अब आगे विघ्न पैदा करना संभव नहीं है, अगर पैदा भी कर ले तो वह चलने का नहीं।"

[८]

जुरेक अपनी बीबी को बुला लाने के लिए दूकान छोड़ चला गया, तब पारा ने झट दीनारों की थैली पर हाथ डाला। दूसरे ही क्षण दूकान के चारों कोनों से डफलियों और घंटियों की आवाज़ सुनाई दी। तुरंत जुरेक दूकान में लौट आया, थैली को छोड़ भागनेवाले पारा पर रांगे का गोला जोर से फेंक दिया। चोट खा कर पारा बेहोश हो गली में जा गिरा। इसके बाद लंगड़ाते हुए वह अहमद के घर पहूँचा।

इस दृश्य को देखने वाले लोगों ने जुरेक को जी भर कर गालियाँ सुनाईं– "जुरेक, तुम अपने पाप की कमाई का सबको लोभ दिखा कर क्या गर्भवती औरत पर रांगे का गोला चलाते हो? तुम आदमी हो या जानवर?"

जुरेक ने लापरवाही के साथ कहा– "तुम लोगों को इससे क्या मतलब है?"

चोट के चंगा होते ही पारा फिर से जुरेक की दूकान की ओर चल पड़ा। वह जुरेक के हाथों में मरने के लिए भी तैयार हो गया, मगर जीनाब के साथ शादी करने की अपनी कोशिश को चालू रखा।

इस बार पारा एक नौकर का भेष धरकर एक थैली हाथ में ले जुरेक की दूकान की ओर चल पड़ा। उसने पूछा– "भूनी हुई गरम-गरम मछलियां दे दो।"

"गरम-गरम मछलियाँ चाहते हो तो भूनने तक रुक जाओ।" यों समझा कर जुरेक भीतर चला गया। मौक़ा पाकर पारा ने दीनारों की थैली पर हाथ रखा। दूसरे ही पल में घंटियाँ बज उठीं। एक ही छलांग में जुरेक दूकान में आ धमका

और उसका मजाक़ उड़ाते हुए बोला– "क्या तुम समझते हो कि मेंने तुम्हारा भेष पहचान नहीं लिया है?" इन शब्दों के साथ रांगे का गोला पारा के सर पर फेंक दिया। झट पारा झुक गया जिससे रास्ते चलने वाले एक नौकर के दही के मटके से रांगे का गोला जा लगा। सारा दही छितर गया और उस नौकर के पीछे चले आनेवाले एक काजी के चेहरे व दाढ़ी पर गिर गया।

अपनी कोशिशों के ना कामयाब होते देख कर भी पारा घबराया नहीं। तीसरी बार वह एक संपेरा का वेष धर कर जुरेक की दूकान के आगे सांपों को खिलाने लगा। इस खेले के समय पारा ने एक नाग को जुरेके के पैरों पर फेंक दिया। इस पर जुरेक डर कर भाग गया। उस गड़बड़ में पारा ने दीनारों की थैली को पकड़ लिया। मगर दूसरे ही पल में जुरेक लौट आया, रांगे के एक गोले से नाग का सर फोड़ डाला और दूसरा गोला पारा पर फेंक दिया। पारा मौक़ा पाकर झट से हट गया। गोला जाकर एक बूढ़ी से जा लगा और दूसरे ही क्षण वह मर गई।

इस घटना को देख लोग गुस्से में आ गये और जुरेक को मारने दौड़े। भीड़ से डर कर जुरेक ने दूकान से दीनारों की थैली को हटाने के लिए मान लिया। इसके बाद उसने अपनी रसोई घर में गड्ढा खोद कर उस थैली को गड्ढे में दफना दिया।

जुरेक की बीबी ने उसे ससझाया– "तुमने दीनारों की थैली किसी तरह दूकान से हटा दी। वे दीनार बच्चे की जन्म-गांठ के उत्सव पर खर्च कर डालेंगे।" लेकिन जुरेक ने अपनी बीबी की बात नहीं मानी, जुरेक ने उस दिन रात को एक सपना देखा। कोई चिड़िया रसोई घर में अपनी चोंच से गड्ढा खोदकर दीनारों की थैली ऊपर खींच रही है। जुरेक एक दम घबरा कर जाग पड़ा और अपनी बीबी से बोला–"अरी, कोई चिड़िया रसोई घर में गड्ढा खोद रही है, जाकर देख लो तो।"

जुरेक की बीबी दिया लेकर रसोई घर में गई। वहाँ पर कोई चिड़िया तो न थी, मगर खिड़की में से कोई बाहर कूद कर भागते हुए उसे दिखाई दिया। उस आदमी के हाथ में दीनारों की थैली थी।

उस थैली को हड़पने वाला आदमी पारा अली ही था। उसने पिछले दिन की शाम को जुरेक के घर के पास छिपे रह कर दीनोरों की थैली को रसोई घर में छिपाते हुए देख लिया और रात को आकर उसे उड़ा ले गया। जुरेक की बीबी को बड़ा दुख हुआ, वह रोते हुए अपने शौहर को कोसने लगी—"तुम्हारा सर फट जाय। बच्चे की जन्म-गांठ पर उन दीनारों को खर्च करने के लिए कहा तो तुम ने न माना। अपनी कंजूसी के लिए तुम चुल्लू भर पानी में डूब कर मर जाओ।"

"अरी, दीनारों की थैली जाएगी कहाँ? मैं उसे अभी ले आता हूँ।" यों अपनी बीबी को समझा कर जुरेक घर से चल पड़ा।

"दीनारों की थैली के विना तुम घर लौटोगे, तो मैं दर्वाजा न खोलूंगी।" जुरेक की बीबी ने शर्त रखी।

जुरेक अच्छी तरह से जानता था कि उस थैली को हड़पने के लिए तीन बार किसने कोशिश की है। वह यह भी जानता था कि पारा अली कोत्वाल अहमद के घर में रहता है। इसलिए वह नजदीक़ के रास्ते से पहले ही अहमद के घर गया, नकली चाभी से बाहर का ताला खोल कर किवाड़ के पीछे छिप कर पारा अली का इंतज़ार करने लगा।

इतने में पारा अली ने अहमद के घर पहूँच कर दर्वाजा खटाया। जुरेक अहमद के स्वर की नक़ल करते बोला—"क्या दीनारों की थैली ले आये हो? देखूं तो, दर्वाजे के नीचे से अन्दर डाल दो! मैंने और हसन ने दाँव लगाया है! बड़ा मजेदार दाँव है! बाद को तुमको सारा किस्सा सुना दूंगा।"

पारा अली ने सोचा कि यह आवाज़ अहमद की ही है। उसने दीनारों की

थैली को किवाड़ के नीचे से मकान के भीतर सरका दिया। जुरेक ने लपककर थैली ले ली और अहमद के घर की सीढ़ियाँ पार कर छत पर पहुँचा, छत से उतरकर गली में घुस गया।

पारा अली ने दरवाजा खटखटाया, लेकिन भीतर से कोई आहट सुनाई न दी। इस पर उसने सोचा कि जुरेक ने उसे खूब चकमा दिया है। वह नजदीक के रास्ते से जुरेक के घर पहुँचा। अन्दर जाकर छत पर गया। वहाँ पर एक कमरे में जुरेक की बीबी अपने बच्चे को गोद में लिये सो रही थी। पारा अली ने उसके जागने के पहले उस औरत के हाथ-पैर बांध दिये, बच्चे को एक टोकरी में लिटाकर जुरेक के इंतजार में दर्वाजे पर खड़ा हो गया।

इस बीच जुरेक ने अपने घर पहुँच कर दर्वाजे पर दस्तक दिया। पारा अली ने जुरेक की बीबी की आवाज़ में पूछा—"क्या दीनारों की थैली मिल गई?"

"लो, ले आया हूँ!" जुरेक ने कहा।

"इस टोकरी में रख दो, मैं दीनार गिनकर ही दर्वाजा खोल दूंगी।" पारा अली ने कहा।

इसके बाद उसने टोकरी को नीचे उतारा और दीनारों की थैली के साथ जुरेक के बच्चेवाली टोकरी को उठाकर पारा अली कोत्वाल अहमद के घर चला गया।

बड़ी देर तक दर्वाजे के न खुलते देख जुरेक ने दर्वाजे पर लात मारना शुरू किया। इस पर अड़ोस-पड़ोसी आ पहुँचे। सबने मिलकर दर्वाजा गिरा दिया और भीतर पहुँचकर देखते क्या हैं? जुरेक की बीबी खाट से बांध दी गई है। न दीनारों की थैली थी और, न बच्चा था।

जुरेक ने अपनी बीबी के बंधन खोल दिये। सारा हाल जानकर वह अहमद के घर पहुँचा। तब सवेरा होने को था। जुरेक ने पारा अली को देखते ही उससे बिनती की—"मैं समझता हूँ कि तुमने आखिर दीनारों की थैली कमा ली है। कम से कम मुझे अपने बच्चे को वापस दे दो।"

(अगले अंक में समाप्त)

कंजूस के घर का खाना

कृष्णशर्मा के घर एक शनिवार की रात को खाने के समय अचानक चार दूर के रिश्तेदार आ धमके।

कृष्णशर्मा अव्वल दर्जे का कंजूस था। कृष्णशर्मा की पत्नी रसोई बनाने की तैयारी में लग गई। उस वक्त कृष्णशर्मा रसोई में पहुँच कर बोला–"चारों लोगों के वास्ते सेर भर चावल पकावेंगे तो हमारा घर जल्द ही लुट जाएगा, तुम आधा सेर चावल पकाओ और परोसते वक्त यह बताओ कि आज अचानक चावल चुक गये हैं।"

मेहमानों को भर पेट खाना न खिला पा सकने की हालत पर चिंता करते हुए कृष्णशर्मा की पत्नी थोड़ा परिचय रखने वाले उनमें से एक मेहमान को अपने पति की कंजूसी का परिचय कराकर बोली–"आप लोगों को मैं भर पेट खाना न खिला सकी, इस बात का मुझे अफ़सोस है!"

इस पर वह रिश्तेदार सांत्वना देते हुए बोला–"तुम चिंता न करो बहन! हम तुम्हारे पति के स्वभाव से भली-भांति परिचित हैं। इसलिए हमने उन्हें यह न बताया कि हम चारों में से दो व्यक्ति हर शनिवार को निर्जल उपवास करते हैं। इसलिए बाकी दो के लिए यह खाना पर्याप्त है।"

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां नवम्बर १९८१ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

Devidas Kasbekar

★

N. Sivannarayana

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियां दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ सितम्बर १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियां कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

जुलाई के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : मेहनत की है, फल मिलेगा!

द्वितीय फोटो : सेवा करूंगी, मेवा मिलेगा!!

प्रेषिका : कु. कल्पना घोपे, १७९, गोरखपुर, जबलपुर-४८२००१ (म. प्र.)

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

शाही राजद्रोही

क्या राणा प्रताप अकबर की फ़ौज को हरा सके? इसे जानने के लिए पढ़िए– अमर चित्र कथा।

आपके अपने बुक स्टोर में। २३० से अधिक कथाएं।
और अब हर १५ दिन में एक नई कथा।
२४ अंकों के लिए सदस्यता शुल्क की दर रु. ६५। नियमित मूल्य रु. ७२।
सदस्यता शुल्क इण्डिया बुक हाउस मैगज़ीन कम्पनी, २४९ डी. एन. रोड, बम्बई ४०० ००१ में स्वीकृत किया जाता है।
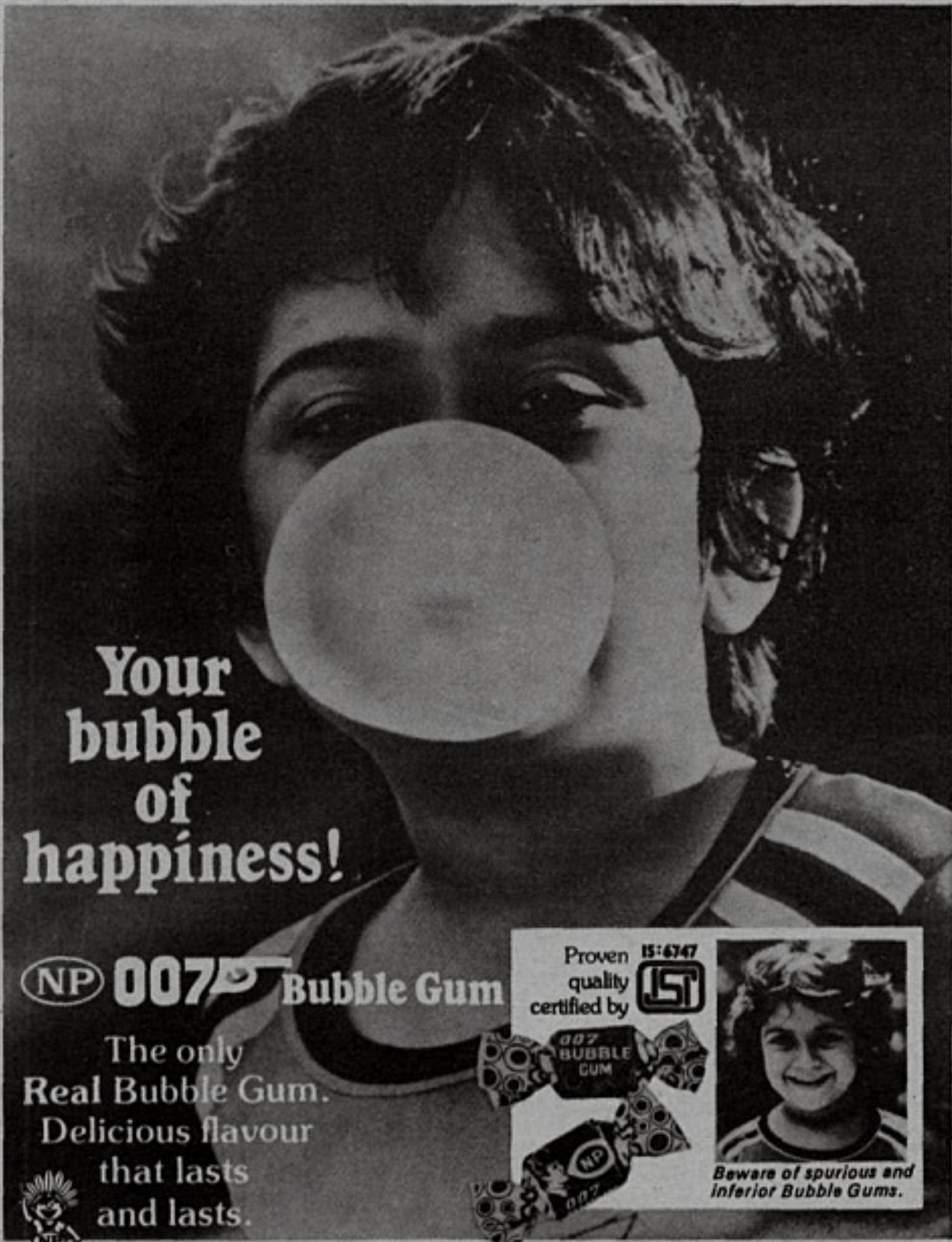
इण्डिया बुक हाउस द्वारा मार्केट किया जाता है।

अमर चित्र कथा

आपकी संस्कृति का दर्पण

OBM/7007-HN

Campa
कैम्पा के संग संग
लेते मज़ा हम!
Campa
कैम्पा आरेंज फ्लेवर - मौजमस्ती का स्वाद!
OBM/5361

everest/81/PP/102-hn

PARLE POPPINS

पारले पॉपिन्स. पहले रूपहली धारियाँ देख लो, फिर रसीले स्वाद का मज़ा लो
अब नक्कालों की चाल नहीं चलेगी.